# अभिनव कृषि

वर्ष–6 अंक–2 जून–2024 रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869

## विशेषांक

● खरीफ फसल उत्पादन तकनीक ● संरक्षित खेती ● मृदा संरक्षण ● पशु प्रबंधन

**प्रसार शिक्षा निदेशालय**

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)–324001

मानव संसाधन विकास निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
सामान्य प्रेरण प्रशिक्षण कार्यक्रम
Common Induction Training Programme
15 अप्रैल से 7 मई, 2024
स्थान : एटीएमक्यूआईसी, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
AGRICULTURE UNIVERSITY, KOTA

# अभिनव कृषि

वर्ष–6 अंक–2 जून–2024 रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869

**संरक्षक**

**डॉ. अभय कुमार व्यास**
कुलपति, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

**सम्पादक मण्डल**

**डॉ. एस.के. जैन**
निदेशक प्रसार शिक्षा
**प्रधान संपादक एवं प्रकाशक**

**डॉ. के.सी.मीना**
सह आचार्य (प्रसार शिक्षा)
**संपादक एवं समन्वयक**

**डॉ. राकेश कुमार बैरवा**
सह आचार्य (शस्य विज्ञान)
**संपादक**

**डॉ. घनश्याम मीणा**
सह आचार्य (पशुपालन)
**सह–संपादक**

**डॉ.अरविन्द नागर**
विषय विशेषज्ञ (उद्यान विज्ञान)
**सह–संपादक**

**डॉ. सेवाराम रूण्डला**
विषय विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
**सह–संपादक**

**श्रीमती गुंजन सनाढ्य**
विषय विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
**सह–संपादक**

**डॉ. रूप सिंह**
विषय विशेषज्ञ (पादप रोग)
**सह–संपादक**

**सुश्री सरिता**
तकनीकी सहायक
**सह–संपादक**

**मनोनीत सलाहकार मण्डल**

**डॉ.प्रताप सिंह**
निदेशक, अनुसंधान

**डॉ. आई.बी. मौर्य**
अधिष्ठाता, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

**डॉ. एम.सी. जैन**
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, कोटा

**डॉ. एन.एल. मीणा**
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, हिण्डौली

**डॉ. मुकेश चन्द गोयल**
निदेशक, प्राथमिकता,निगरानी एवं मूल्यांकन

**डॉ. महेन्द्र सिंह**
निदेशक, मानव संसाधन विकास

## सदस्यता शुल्क

- ☞ त्रैमासिक (प्रति अंक) 30 रू.
- ☞ वार्षिक (चार अंक) 100 रू
- ☞ आजीवन (15 वर्ष)1000 रू.

## विज्ञापन दरें

| | | |
|---|---|---|
| (i) | अन्तिम सम्पूर्ण (रंगीन) | रू. 10,000/- |
| (ii) | प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे (रंगीन) | रू. 6,000/- |
| (iii) | अन्तिम आधा पृष्ठ (रंगीन) | रू. 5,000/- |
| (iv) | प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे आधा पृष्ठ (रंगीन) | रू. 3,000/- |
| (v) | अन्दर का सम्पूर्ण पृष्ठ (श्याम–श्वेत) | रू. 4,000/- |
| (vi) | अन्दर का आधा पृष्ठ (श्याम–श्वेत) | रू. 2,000/- |

नोट : यदि विज्ञापन वर्ष के सभी चार अंकों के लिए दिया जाता है तो उपरोक्त दरों में 25 प्रतिशत की कमी की जायेगी।

## सदस्यता एवं नवीनीकरण हेतु

खाता धारक : DEE, Agriculture University, Kota
बैंक : ICICI BANK, Nayapura, Kota
खाता संख्या : 687801700345
IFSC : ICIC0006878

## लेख एवं सुझाव भेजने का पता

"अभिनव कृषि"
प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
बोरखेड़ा, बारां रोड़ कोटा (राजस्थान) – 324001
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com दूरभाष : 0744- 2326727

**प्रकाशक: प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा**
**मुद्रक** : डामयण्ड प्रिन्टर्स, नई धानमण्डी, कोटा (राज.) मो. 9414231079

नोट– "अभिनव कृषि" में आलेख प्रकाशन हेतु लेखकों का सदस्य होना अनिवार्य है तथा लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक (प्रसार शिक्षा)

Directorate of Extension Education
प्रसार शिक्षा निदेशालय
AGRICULTURE UNIVERSITY, KOTA
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Borkhera, Baran Road, Kota 324 001 (Raj.)
बोरखेडा, बारां रोड, कोटा 324001 (राज.)

# प्रधान संपादक की कलम से.....

आज भी हमारे देश का अधिकांश किसान खेती के लिए मौसम पर निर्भर है। पिछले कुछ दशकों में पृथ्वी की जलवायु में तेजी से परिवर्तन के कारण फसलों की पैदावार पर बुरा असर देखने को मिला है। बढ़ते तापमान, अनियमित वर्षा, सूखा तथा बाढ़ की स्थिति से फसलों विशेषतः खरीफ फसलों की कृषि गतिविधियों में बदलाव करने की आवश्यकता महसूस होने लगी है। जलवायु परिवर्तन के कारण कई कीट– पीड़क एवं बीमारियों का अधिक प्रकोप होने व नए क्षेत्रों में फैलाव का अंदेशा है। साथ ही पशुओं में भी ताप– लहर, हरे चारे की कमी तथा परजीवियों व वेक्टर जनित रोगों का असर देखने को मिल रहा है।

जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से बचाव हेतु हमें 'क्लाइमेट– स्मार्ट कृषि' अपनाने की आवश्यकता है। पिछले कई वर्षो में हमारे देश के कृषि वैज्ञानिको ने फसलों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने की दिशा में व्यापक शोध किया है। जिसके फलस्वरूप फसलों की नई– नई सहनशील किस्मों से लेकर उन्नत तकनीकों का विकास हुआ है।

हमें मौसम विभाग द्वारा जारी मौसम पूर्वानुमान तथा कृषि सलाह के अनुसार बुवाई एवं अन्य कृषि गतिविधियां करनी चाहिए। फसलों की मौसम प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव, खड़ी फसल से जल निकास, वर्षा जल संग्रहण हेतु खेत तलाई तथा खरपतवार नियंत्रण का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए मृदा स्वास्थ्य बहुत महत्त्वपूर्ण होता है , अतः मृदा की उर्वरा शक्ति तथा जल ग्रहण क्षमता बढ़ाने के लिए प्रति वर्ष देसी खाद का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। कीट पीड़क एवं रोगो से बचाव हेतु केवल रसायनिक उपचार पर निर्भर ना रह कर समन्वित कीट एवं रोग प्रबंध पर बल देना चाहिए।

पत्रिका के इस अंक में कृषि समसामयिकी विषयों पर आलेखों जैसे कि आगामी खरीफ ऋतु में सोयाबीन व धान की उन्नत किस्मों, मूंग तथा स्वीट– कॉर्न उत्पादन की उन्नत तकनीक, गेंदे की खेती, संरक्षित खेती, मृदा संरक्षण, इत्यादि को सम्मिलित किया गया है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि अभिनव कृषि का यह अंक कृषकों, कृषि– प्रसार कार्यकर्ताओं एवं अन्य पाठकों हेतु उपयोगी सिद्ध होगा। मैं सभी पाठकों से इस पत्रिका को और उपयोगी बनाने हेतु विचार आमंत्रित करता हूँ। अंत में पत्रिका के सभी पाठकों, लेखकों, पत्रिका के संपादक एवं सलाहकार मण्डल के सभी सदस्यों को हार्दिक बधाई एवं लेखकों को शुभकामनाएँ देता हूँ।

जय हिन्द।

(एस.के. जैन)

# अभिनव कृषि

वर्ष–6 अंक–2 जून–2024


## अनुक्रमणिका


| क्र.सं. | विषय विवरण | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 1. | सोयाबीन की उन्नत किस्में एवं उनकी विशेषताऐं<br>भरत लाल मीना, धर्म सिंह मीना एवं चतुर्भुज मीना | 1-4 |
| 2. | धान की उन्नत किस्में<br>मनोज कुमार, के.एम. शर्मा एवं संध्या | 5 |
| 3. | धान की सीधी बुवाई<br>राकेश कुमार बैरवा, रूप सिंह एवं महेन्द्र सिंह | 6-7 |
| 4. | मूंग की उन्नत उत्पादन तकनीक<br>सुनीता पांडेय, अशोक कुमार मीणा, शालिनी पांडेय एवं मोती लाल मेहरिया | 8-11 |
| 5. | मीठी मक्का को उगाने की तकनीक, इसके उपयोग एवं गुण<br>हितेश गेनण, राम किशन मीणा, एम.सी.जैन एवं अनुज कुमार | 12-13 |
| 6. | बायोगैस तकनीकः पर्यावरण संरक्षण का उपयुक्त माध्यम<br>मीनाक्षी मीना, हेमराज मीना, टी.एस. चैत्रा एवं ओमप्रकाश मीना | 14-15 |
| 7. | पॉली हाउस में उत्पादन को अनुकूलित करने की रणनीतियाँ<br>राजेश कुमार शर्मा, राकेश कुमार यादव एवं अरविन्द नागर | 16-18 |
| 8. | प्राकृतिक खेती किसानों के लिये वरदान<br>देवीलाल किकरालियाँ, अनुज कुमार, उमा नाथ शुक्ल एवं विजय लक्ष्मी यादव | 19 |
| 9. | कृषि जोखिम निवारण<br>नरेश कुमार, नलीनी रामावत, रनक कूड़ी एवं रूपसिंह | 20-21 |
| 10. | मृदा संरक्षण में आधुनिक नवाचार<br>शालिनी मीणा, रामकिशन मीणा एवं उदिति धाकड़ | 22-23 |
| 11. | गेंदे की उन्नत खेती एवं उपयोग<br>रिशिका चौधरी एवं अनुज कुमार | 24-25 |
| 12. | ट्राईकोडर्मा की फसलों के रोग प्रबंधन में सफल कहानी किसानों की जुबानी<br>डी.एल. यादव, प्रदीप कुमार एवं प्रताप सिंह | 26-27 |
| 13. | बरसात के मौसम में पशु प्रबंधन<br>दीपक कुमार, घनश्याम मीना, इंदिरा यादव एवं महेन्द्र चौधरी | 28-29 |

# सोयाबीन की उन्नत किस्में एवं उनकी विशेषताऐं

**भरत लाल मीना, धर्म सिंह मीना एवं चतुर्भुज मीना**
कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा एवं कृषि महाविद्यालय, कोटा (राज.)

## सोयाबीन की उन्नत किस्में

किसी भी फसल की अधिकाधिक उत्पादन लेने में उन्नत किस्मों तथा उनके गुणवत्तायुक्त बीज की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विकसित उन्नत किस्मों को विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में कम से कम तीन वर्षो के निरन्तर परीक्षण एवं आंकलन में लाभकारी पाये जाने पर ही उन्हे राज्य / क्षेत्र अनुसार विमोचित किया जाता है। इन किस्मों की अधिक उत्पादन क्षमता एवं विशेष गुण होते है जिनसे वह विभिन्न जैविक एवं अजैविक करको का विपरीत परिस्थितियो में भी सामना करने में सक्षम होती है। वर्तमान में निम्नलिखित किस्में किसानों द्वारा प्रयोग में लायी जा रही है।

### (1) जे.एस. 335

पीले दाने वाली तथा 100–105 दिन में पकने वाली इस किस्म में फूल बैंगनी रंग के होते है तथा फलियां चिकनी एवं चटकती नहीं हैं। दाना पीला, मध्यम आकार का तथा काली नाभिका (हायलम) वाला होता है। अच्छी अंकुरण क्षमता वाली इस किस्म की पैदावार 25–30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है। यह किस्म जीवाणु पत्ती धब्बा एवं अंगमारी रोगों के लिये प्रतिरोधी तथा मोजेक एवं तना मक्खी के लिये सहनशील है।

### (2) जे.एस. 93–05

संकरी पत्तियों एवं बैंगनी फूलों वाली यह किस्म 90–95 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इस किस्म में अंकुरण क्षमता उत्तम, दाना मध्यम मोटा तथा 100 दानों का भार 9–10 ग्राम होता है। यह किस्म कई प्रकार के रोगों एवं कीटों से मध्यम प्रतिरोधी है।

### (3) जे.एस. 97–52

यह मध्यम अवधि एवं मध्यम दाने वाली प्रजाति है। इसमें बहुरोधी क्षमताऐं है। यह प्रमुख रोगों जैसे पीला मोजेक, जड़ सड़न, प्रमुख कीटों जैसे तना छेदक एवं पत्ती भक्षक कीटों एवं अधिक नमी के लिये प्रतिरोधी/सहनशील है। यह प्रजाति अपने विशिष्ट आकारीय लक्षणों जैसे सफेद फूल, हल्के रंग की फलियां, तने एवं पत्तियों पर रोंये एवं गहरी काली नाभिका (हाइलम) के साथ समरूपता एवं नवीनता रखती है।

जे.एस. 97–52 के बीजों में अधिक अंकुरण एवं लम्बे समय तक भण्डारण के बाद भी वांछनीय अंकुरण की विशेष क्षमता है। बीज दर 60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर, लाईन से लाईन की दूरी 45 से.मी. रखें। अच्छे पोषक स्तर वाली भारी मिट्टी एवं कुशल जल प्रबन्धन में उत्पादन क्षमता 25–30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है तथा 98–102 दिन में तैयार हो जाती है।

**तालिका : 1 सोयाबीन की उन्नत किस्में एवं उनकी विशेषताएं**

| क्र.सं. | किस्मों का नाम | पकने की अवधि (दिन) | उपज (क्विं/हे.) |
|---|---|---|---|
| 1 | जे.एस. 335 | 100–105 | 25–30 |
| 2 | जे.एस.93–05 | 90–95 | 25–30 |
| 3 | जे.एस. 97–52 | 98–102 | 25–30 |
| 4 | जे.एस.95–60 | 80–85 | 18–20 |
| 5 | प्रताप सोया–2 | 90–95 | 25–30 |
| 6 | आर. के. एस.–24 | 98–100 | 25–30 |
| 7 | आर. के. एस.–45 | 90–95 | 25–30 |
| 8 | जे.एस. 20–34 | 90–92 | 20–25 |
| 9 | जे.एस. 20–29 | 95–97 | 20–25 |
| 10 | आर. के. एस.–113 | 98–102 | 22–25 |
| 11 | एन.आर.सी.–127 | 97–101 | 20–23 |
| 12 | जे.एस. 20–116 | 95–100 | 20–25 |
| 13 | जे.एस. 95–98 | 95–98 | 20–22 |
| 14 | जे.एस. 20–98 | 95–98 | 20–22 |
| 15 | एन. आर. सी.–138 | 90–93 | 20–23 |
| 16 | आर.वी.एस.एम. 2011–35 | 95–97 | 20–22 |

**(4) जे.एस. 95–60**

यह किस्म जे.एस. 93–05 से भी 8–10 दिन पूर्व पककर तैयार हो जाती है। दाने का आकार अण्ड़ाकार–बोल्ड, नाभिका हल्की भूरी, दाना चमकदार पीला होता है तथा अंकुरण क्षमता 85–90 प्रतिशत होती है। फूलों का रंग नीला होता है। तना, पत्तियाँ व फली चिकनी होती है। पत्तियाँ गहरे हरे रंग की होती है तथा यह 85–88 दिन में पक जाती है। बीज दर 80 किलो प्रति हैक्टेयर एवं लाइन से लाइन की दूरी 30 से.मी. पर औसत उत्पादन 20 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होता है। यह किस्म जड़ सड़न व पर्णीय बीमारियों, पत्ती चूसक कीटों, पत्तियां काटने वाले कीटों के लिये प्रतिरोधी सहनशील क्षमता होती है।

**(5) प्रताप सोया–2**

यह किस्म उचित परिस्थितियों में 90–95 दिन में पककर 25–30 क्विंटल/हैक्टेयर की उपज देती है। इसमें तेल की मात्रा 18–20 प्रतिशत पायी जाती है। यह किस्म तम्बाकू इल्ली, गर्डल बीटल तथा अन्य पत्तियां खाने वाली कीटों से मध्यम प्रतिरोधी, पत्ती धब्बा रोग तथा अन्य बीमारियों से भी मध्यम प्रतिरोधी पायी गई है।

**(6) प्रताप राज–24 (आर.के.एस. 24)**

मध्यम ऊँचाई की यह किस्म 95–100 दिन में पककर तैयार हो जाती है। फूल सफेद, पत्तियां गहरी हरी रंग की चौड़ी, तना मजबूत तथा पत्तियों, तने और फलियों पर भूरे रंग के रोये पाये जाते है। बीज हल्के पीले रंग के भूरी नाभिका वाले होते है। उचित परिस्थितियों में इसकी पैदावार 25–30 क्वि0/है0 होती है। इस किस्म में तेल की मात्रा 21.5 प्रतिशत होती है। यह किस्म गर्डल, बीटल, सेमी लूपर तथा तम्बाकू इल्ली से मध्यम प्रतिरोधी पायी गई है तथा पीत विषाणु रोग, चार कोल रोट (तना गलन) तथा पत्ती धब्बा रोगों से भी मध्य प्रतिरोधी पायी गई है।

**(7) प्रताप राज–45 (आर.के.एस. 45)**

यह किस्म 95–98 दिन में पककर तैयार हो जाती है। एवं 25–30 क्विं./है. उत्पादन क्षमता है। फूल सफेद, पत्तियां चौड़ी व गहरी हरि पत्तियों, तने और फलियों पर भूरे रंग के रोये रहते है। यह किस्म गर्डल बीटल, सेमीलूपर तथा तम्बाकू इल्ली के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है। पीत विषाणु रोग, चारकोल रोट (तना गलन) तथा पत्ती धब्बा रोगों से मध्यम प्रतिरोधी है।

**(8) कोटा सोया–1 (आर.के.एस.–113)**

यह मध्यम ऊँचाई वाली किस्म है जिसके फूल बैंगनी, पत्तियां हल्के हरे रंग की व पत्तियां, तने व फलियों पर भूरे रंग के रोये पाये जाते है। बीज मध्यम आकार, पीले रंग एवं भूरी नाभिका वाले होते है। यह किस्म लगभग 102 दिन में पककर 22–25 क्विंटल/हैक्टर की पैदावार देती हैं। इस किस्म में तेल की मात्रा औसतन 18.63 प्रतिशत होती है। यह किस्म पीतशीरा मोजेक रोग से प्रतिरोधी तथा पत्ती भक्षक, तना मक्खी, चेंपा एवं पर्णसुरंगक कीटों से मध्यम प्रतिरोधी हैं।

**(9) जे.एस. 20–34**

यह मध्यम ऊँचाई वाली किस्म है जिसके फूल सफेद, पत्तियां गहरे हरे रंग की व तने व फलियां रोये रहित है। बीज मध्यम आकार के, पीले रंग के काली नाभिका वाले होते है। यह किस्म लगभग 90 दिन में पककर 20–25 क्विंटल/हैक्टर तक की पैदावार देती हैं। इस किस्म में तेल की मात्रा 20–22 प्रतिशत होती है। यह किस्म पत्ती खाने वाले कीटों, तना मक्खी, चारकोल रॉट, पत्ती धब्बा रोग, जीवाणु रोग से सहनशील हैं।

**(10) जे.एस. 20–29**

यह मध्यम ऊँचाई वाली किस्म है जिसके फूल सफेद, पत्तियां हरे रंग की व फलियों पर भूरे–पीले रंग के रोये पाये जाते है। बीज बड़े आकार के, पीले रंग के काली नाभिका वाले होते है। यह किस्म लगभग 95 दिन में पककर 20–25 क्विंटल/हैक्टर तक की पैदावार देती हैं। इस किस्म में तेल की मात्रा 20–22 प्रतिशत होती है। यह किस्म पत्ती खाने वाले कीटों, तना मक्खी, गर्डल बीटल, जीवाणु रोग, चारकोल रॉट, पत्ती धब्बा , झुलसा एवं विषाणु रोग से सहनशील हैं।

**(11) एन आर सी –127**

यह मध्यम ऊँचाई की एवं पीले दाने वाली किस्म है जिसकी पत्तिया हल्के हरे रंग की एवं तने व फलियों पर हल्के रंग के रोये पाये जाते है इस किस्म मे फूलों का रंग सफेद एवं बीज मध्यम आकार के पीले रंग के एवं जिसमे नाभिका काले रंग की होती है। यह किस्म लगभग 97–101 दिन पककर लगभग 20–23 क्वि. प्रति हेक्टर की पेंदावर देती है इसमे तेल की मात्र 18–19 प्रतिशत होती है यह किस्म पीट शिरा मोजेक रोग के प्रति प्रतिरोधी पायी गयी। यह किस्म सोया फोर्टिफाइड़ व्हीट फ्लोर के लिय उपयुक्त है। इस तरह की देश मे यह पहली किस्म है।

**(12) जे.एस. 20–116**

यह मध्यम अवधि मे पकने वाली किस्म है जो 95–100 दिनों पक कर अनुकूल परिस्थितियो मे 20–25 किव. प्रति हेक्टर की पैदावार देती है इस किस्म मे सफेद रंग के फूल, तने व फलियों चिकनी होती है यह मध्यम ऊँचाई की, पीले रंग के दाने एवं उच्च अंकुरण क्षमता वाली किस्म है बीज मध्यम आकार, एवं काले रंग नाभिका वाले होते है। इसमे तेल की मात्र 19-20% पायी जाती है यह कीट–व्याधियों जैसे पीला मोजेक, चारकोल सड़न, राइजोक्टोनिया एरियल ब्लाइट, पत्ती धब्बा, तन्ना मक्खी, तना छेदक एवं पत्तीभक्षक इल्लियां।

**(13) जे.एस. 95–98**

यह मध्यम अवधि मे पकने वाली किस्म है जो 95–98 दिनों पक कर अनुकूल परिस्थितियो मे 20–22 किव. प्रति हेक्टर की पैदावार देती है इस किस्म मे फूलो का रंग बेंगनी एवं तने व फलियों भूरे रंग के रोये पाये जाते है यह मध्यम ऊँचाई की, पीले रंग के दाने एवं उच्च अंकुरण क्षमता वाली किस्म है बीज मध्यम आकार, एवं काले रंग नाभिका वाले होते है। इसमे तेल की मात्र 20% पायी जाती है यह बहू प्रतिरोधी किस्म है जो जैविक व्याधियों जैसे पीला मोजेक, चारकोल सड़न, झुलसन, जीवाणु धब्बा, तना धब्बे एवं तना मक्खी, चक्रभृंग एवं पत्तीभक्षक इल्लिया के प्रति सहनशील है

**(14) जे.एस. 20–98**

यह मध्यम अवधि मे पकने वाली किस्म है जो 95–98 दिनों पक कर अनुकूल परिस्थितियो मे 20–22 किव. प्रति हेक्टर की पैदावार देती है इस किस्म मे फूलो का रंग सफेद एवं तने व फलियों भूरे रंग के रोये पाये जाते है यह मध्यम ऊँचाई की, पीले रंग के दाने एवं उच्च अंकुरण क्षमता वाली किस्म है बीज मध्यम आकार, एवं काले रंग नाभिका वाले होते है। इसमे तेल की मात्र 19% पायी जाती है यह बहू प्रतिरोधी किस्म है जो जैविक व्याधियों जैसे पीला मोजेक, चारकोल सड़न, झुलसन, जीवाणु धब्बा, पर्णीयधब्बे एव तना मक्खी, चक्रभृंग एवं पत्तीभक्षक इल्लिया के प्रति सहनशील है।

**(15) एन. आर. सी. 138**

यह अल्प अवधि मे पकने वाली किस्म है जो 90–93 दिनों पक कर अनुकूल परिस्थितियो मे 20–24 क्वि. प्रति हेक्टर की पैदावार देती है इस किस्म मे सफेद रंग के फूल, तने व फलियों गहरे भूरे रंग के रोये पाये जाते हैं यह मध्यम ऊँचाई (44.59 से.मी) की, पीले रंग के दाने पर भूरे रंग की नाभिका वाले होते है। बीज मध्यम आकार जिनके 100 दानों का वजन 10 ग्राम होता है। इसमे तेल की मात्र 20-10% पायी जाती हैं। यह किस्म पॉड ब्लाइट, टारगेट लीफ स्पॉट एवं पीला मोजेक के लिए मध्य प्रतिरोधी पायी गयी हैं। यह गर्डल बिटिल के लिए कम प्रतिरोधी एवं पर्णभक्षी कीटो के लिए मध्यम प्रतिरोधी पायी गयी।

**(16) आर.वी.एस.एम. 2011–35**

यह मध्यम अवधि मे पकने वाली किस्म है जो 95–98 दिनों पक कर अनुकूल परिस्थितियो मे 20–23 क्वि. प्रति हेक्टर की पैदावार देती है इस किस्म मे फूलो का रंग सफेद एवं तने व फलियों पर भूरे रंग के रोये पाये जाते है यह मध्यम ऊँचाई (63–73 से.मी.), दाने अण्डाकार, पीले रंग एवं काले रंग की नाभिका वाले होते है। इसके बीज बर्डे आकार के जिनका 100 दानों का भार लगभग 13.10 ग्राम होता हैं। इसमे तेल की मात्रा 19-13% पायी जाती है। यह किस्म पॉड ब्लाइट, टारगेट लीफ

स्पॉट एवं पीला मोजेक के लिए मध्यम प्रतिरोधी पायी गयी हैं वं तना मक्खी, गर्डल बिटिल एवं पर्णभक्षी कीटों के लिए बहू प्रतिरोधी पायी गयी।

**(17) ए.एम.एस. 100–39**

यह मध्यम अवधि मे पकने वाली किस्म है जो 95–97 दिनों में पक्कर अनुकूल परिस्थितियो मे 20–22 क्वि. प्रति हेक्टर की पैदावार देती है इस किस्म मे फूलो का रंग सफेद एवं तने व फलियों भूरे रंग के रोये पाये जाते है यह मध्यम ऊँचाई (57–66 से.मी.), दाने हल्के पीले, चमकीले एवं काले रंग की नाभिका वाले होते है। बीज बीज बडें आकार के जिनका 100 दानों का भार लगभग 11.50 ग्राम होता हैं। इसमे तेल की मात्रा 20-5% पायी जाती है। यह किस्म चारकोल रोट एवं माइरोथिसियम लीफ स्पॉट के लिए मध्यम प्रतिरोधी पायी गयी हैं एवं तना मक्खी एवं पर्णभक्षी कीटो के लिए प्रतिरोधी पायी गयी।

**किसान अपने खेत पर स्वय का सोयाबीन बीज उत्पादन केसे करें ?**

1. बीज उत्पादन के लिए चयनित किस्म का प्रमाणित प्रपत्र पर न्यूनतम 70 प्रतिशत अंकुरण सुनिश्चित करे।
2. यह सुनिश्चित करें कि जिस किस्म का बीज उत्पादन किया जा रहा है वह उसी खेत मे पिछले वर्ष मे न उगाई गई हो एवं खेत मे जल निकास का उचित प्रबन्ध हो ।
3. बुवाई से पहले खेत कि गहरी जुताई एवं विपरीत दिशा मे बख्खर एवं पाटा चलाकर खेत को समतल करे।
4. मानसून के आने के पश्चात 45 से. मी. कतार से कतार की दूरी एवं 5 से. मी. बीज की दूरी रखते हुए अधिकतम 3 से. मी. की गहराई पर 60–80 कि. ग्रा. /हेक्टर कि दर से उपयुक्त सीड ड्रिल (बीबीएफ या रीज फेरो) से बुआई करें।
5. बुवाई से पूर्व सोयाबीन के बीज को थाइरम एवं कार्बेण्डाजिम (2:1) 3 ग्राम प्रति कि. ग्रा. हेक्टर की दर से अथवा मिश्रित उत्पाद कार्बोक्सिन 37.53 प्रतिशत थाइरम 37.5 प्रतिशत ग्राम प्रति कि. ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। इनके स्थान ट्राइकोडर्मा विरिडी (8–10 ग्राम प्रति कि. ग्रा. बीज) से उपचारित किया जा सकता है। तत्पश्चात जैविक खाद ब्रेडी राइजोबियम कल्चर एवं पीएसबी कल्चर (प्रत्येक 5 ग्राम प्रति कि. ग्रा. बीज की दर से) उपचारित करे एवं छाया मे सूखा कर तुरन्त बुवाई करे।
6. सोयाबीन के पोधों का उचित पोषण के लिए अनुशंसित 20:60:40:20 कि. ग्रा./हेक्टर कि दर आवश्यक नाइट्रोजन : फास्फोरस : पोटाश : गंधक कि पूर्ति बुवाई के समय विभिन्न उर्वरकों के प्रयोग से देना चाहिए।
7. फसल सुरक्षा हेतु विभिन्न जैविक (कीट बीमारी/खरपतवार आदि) एवं अजैविक तनावों (सूखा अतिवृष्टि आदि) से होने वाली उत्पादन मे कमी को टालने हेतु समय समय पर खेत कि निगरानी कर उनका प्रबन्ध करे।
8. निरीक्षण के दौरान खेत मे पाये जाने वाले अवांछित कीट एवं रोगग्रस्त पोंधे, खरपतवार आदि को नष्ट करे। पत्तियों का आकार, फूलों के रंग फलियों के रोएँ आदि लक्षणों के आधार पर अवांछित/अलग किस्म के पोंधों कि पहचान कर उन्हे नष्ट करें।
9. क्रांतिक अवस्थाए जैसे कि पोंधों मे फूल आना, फलिया बनना एवं दाने भरना आदि पर यदि नमी कमी हो तो सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। बीबीएफ सीड ड्रिल या रीज फरो से बुवाई करने पर सूखा एवं अधिक वर्षा से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है।
10. फलियों का हरा रंग बदलने या पूर्णतया समाप्त होने पर यह मन ले कि फलिया परिपक्व हो चुकी हैं। इस अवस्था मे सोयाबीन कि कटाई करनी चाहिए। कटी हुई फसल को 2–3 दिन धूप मे सुखाकर थ्रेशर से धीमी गति (350–400 आर पी एम ) पर गहाई करनी चाहिए और ध्यान रहे कि बीज के छिलके को क्षति नहीं होनी चाहिए।
11. गहाई के बाद बीज को धूप मे अच्छे से सुखाकर भंडारण करना चाहिए। भंडारण गृह ठंडा, नमी रहित व हवादार होना चाहिए और ध्यान रखे कि चार से अधिक बोरियों को एक के ऊपर एक नहीं रखे। बीज कि बोरियों को उचाई से नहीं पटकना चाहिए क्योकि बीज कि अंकुरण क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

# धान की उन्नत किस्में

**मनोज कुमार, के. एम. शर्मा एवं संध्या**

कृषि अनुसंधान केंन्द्र, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

धान भारत की सबसे लोकप्रिय खाद्य फसल है और यह भारतीय कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत में लगभग सभी राज्यों में धान उगाया जाता है जो कुल खेती योग्य क्षेत्र के 30 प्रतिशत से अधिक को कवर करता है और देश के कुल खाद्यान्न उत्पादन में 40 प्रतिशत से अधिक का योगदान देता है। यह 44.10 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में उगाया जाता है जिसका उत्पादन 165.30 मिलियन टन और उत्पादकता 3780 किलोग्राम/हेक्टेयर है। राजस्थान में धान का क्षेत्रफल 0.23 मिलियन हेक्टेयर है जिसका उत्पादन 0.66 मिलियन टन और उत्पादकता 2860 किलोग्राम/हेक्टेयर है। राजस्थान में धान कोटा, बूंदी, बारां, झालावाड़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, उदयपुर, प्रतापगढ़, राजसमंद, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, भरतपुर, अलवर, करौली और सवाई माधोपुर में उगाया जाता है। कोटा क्षेत्र राजस्थान का प्रमुख धान उत्पादक क्षेत्र है। कोटा क्षेत्र में धान 0.17 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में उगाया जाता है जिसका उत्पादन 0.73 मिलियन टन और उत्पादकता 4325 किलोग्राम/हेक्टेयर है। धान दुनिया की आधी आबादी का प्रमुख भोजन है जिसका सेवन प्राचीन काल से किया जा रहा है और इसे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और थायमिन, राइबोफ्लेविन और नियासिन जैसे विटामिन के सबसे आवश्यक स्रोतों में से एक माना जाता है। यह न केवल कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन का प्राथमिक स्रोत है बल्कि इसमें खनिज और फाइबर भी होते हैं। वैश्विक स्तर पर यह 27 प्रतिशत आहार ऊर्जा 20 प्रतिशत आहार प्रोटीन और 3 प्रतिशत आहार वसा प्रदान करता है। विश्व जनसंख्या की वृद्धि दर और विश्व में कृषि योग्य भूमि में कमी के साथ खाद्य सुरक्षा को देखते हुए 2030 तक धान का उत्पादन 40 प्रतिशत बढ़ाने की आवश्यकता है जिसे उन्नत किस्मो के बीजो के उपयोग के साथ साथ अच्छे प्रबंधन से बढ़ाया जा सकता है। किसान भाई निम्न किस्मों का उपयोग कर सकते है–

**पूसा बासमती 1718** : मध्यम ऊंचाई (115–120 से.मी.) की यह किस्म 135–140 दिन में पककर औसतन 45–50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। इसका दाना लम्बा, पतला खुशबूदार होता है। यह किस्म जीवाणु अंगमारीए ब्लास्ट एवं पर्णधार झुलसा रोग तथा धान का भूरा फुदका कीट के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है।

**पूसा 1592 :** खुशबूदार धान की इस किस्म के पौधे की ऊंचाई 105–110 से.मी . तक होती है। यह किस्म 130–135 दिन में पककर औसतन 45–50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। इस किस्म का दाना लम्बा एंव पतला होता है। यह किस्म पर्णधार झुलसा, जीवाणु अंगमारी रोग तथा धान का भूरा फुदका कीट के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है।

**प्रताप सुगन्ध–1 :** इस किस्म की औसत पैदावार 45–50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है। इस किस्म का दाना लम्बा, पतला व बासमती गुणों से परिपूर्ण होता है । मध्यम (105–120 सेमी) वाली यह किस्म 135–140 दिनों में पककर तैयार होती है। यह किस्म ब्लास्ट, जीवाणु अंगमारी रोग व कीटो से मध्यम प्रतिरोधी है।

**पूसा बासमती 1509 :** मध्यम ऊँचाई (100–105 से.मी.) की 120–125 दिन में पकने वाली किस्म है जो औसतन 45–50 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज देती है तथा इसका दाना लम्बा, खुशबूदार एवं बासमती गुणों से युक्त होता है। यह किस्म जीवाणु अंगमारी एवं ब्लास्ट तथा कीटों से मध्यम प्रतिरोधी है।

**पूसा सुगन्धा–5 (पी.2511) :** यह किस्म 130–135 दिन में पककर औसतन 45–50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। मध्यम ऊंचाई (110–115 से.मी.) की यह किस्म यह किस्म धान में लगने वाली बीमारियों एवं कीटो के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है। ये किस्म धान की सीधी बुवाई हेतु भी उपयुक्त पायी गयी है।

**पूसा सुगन्धा–4 (पी.1121) :** बासमती धान की मध्यम कद की ऊँचाई वाली इस किस्म की औसत पैदावार 45–50 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है। इस किस्म का दाना लम्बा व पतला तथा खाने में स्वादिष्ट एवं खुशबूदार होता है। यह किस्म 135–140 दिन में पककर तैयार हो जाती है। यह किस्म ब्लास्ट, तनाछेदक तथा जीवाणु अंगमारी से मध्यम प्रतिरोधी है। ये किस्म धान की सीधी बुवाई हेतु भी उपयुक्त पायी गयी है

**इम्प्रूव्ड पूसा बासमती–1 (पी–1460) :** यह बासमती धान की अर्द्धबौनी (100–110 से.मी. ऊंचाई) एवं इसका दाना पतला, लम्बा, चमकीला एवं अत्यधिक खुशबूदार होता है। यह किस्म 130–135 दिन में पककर औसतन उपज 40–45 क्विंटल प्रति हैक्टेयर देती है। यह ब्लास्ट, तना छेदक, जीवाणु अंगमारी एवं कीटों के प्रति मध्यम प्रतिरोधी पाई गई है।

**पूसा बासमती–1:** यह किस्म अर्द्धबौनी (100–105 सेमी) व बासमती गुणों से परिपूर्ण है। इसका दाना पतला लम्बा चमकदार व खाने में स्वादिष्ट होता है।यह किस्म 130–135 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 40–45 क्विं/है. है। यह किस्म धान में लगने वाली बीमारियों एवं कीटो के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है।

**माही सुगन्धा :** यह बासमती धान की अर्द्धबौनी (100–110 सेमी) एवं अधिक पैदावार देने वाली किस्म है। इसकी औसत पैदावार 35–40 क्विं/है. होती है। इस किस्म का दाना लम्बा व पतला होता है । यह किस्म 130–135 दिनों में पककर तैयार होती है। तथा इस किस्म में कीटों एवं रोगो के प्रकोप कम होता है।

**पूसा बासमती 1609:** बासमती धान की मध्यम कद की ऊँचाई वाली इस किस्म की औसत पैदावार 45–50 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है। इस किस्म का दाना लम्बा व पतला तथा खाने में स्वादिष्ट एवं खुशबूदार होता है। यह किस्म 120–125 दिन में पककर तैयार हो जाती है। यह किस्म ब्लास्ट, तथा जीवाणु अंगमारी से मध्यम प्रतिरोधी है।

**पूसा बासमती 1847 :** मध्यम ऊंचाई (105–110 से.मी.) की यह किस्म 120–125 दिन में पक्कर औसतन 50–55 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। इसका दाना लम्बा, पतला खुशबूदार होता है। यह किस्म जीवाणु अंगमारी, ब्लास्ट एवं पर्णधार झुलसा रोग तथा धान का भूरा फुदका कीट के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है।

**पूसा बासमती 1885 :** बासमती धान की इस किस्म के पौधे की ऊंचाई 115–120 से.मी . तक होती है। यह किस्म 140–145 दिन में पककर औसतन 45–50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। इस किस्म का दाना लम्बा एंव पतला होता है। यह किस्म जीवाणु अंगमारी एवं ब्लास्ट रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है।

**पूसा बासमती 1886**: मध्यम ऊंचाई (95–100 से.मी.) की यह किस्म 140–145 दिन में पककर औसतन 45–50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। इसका दाना लम्बा, पतला खुशबूदार होता है। यह किस्म जीवाणु अंगमारी एवं ब्लास्ट रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है।

# धान की सीधी बुवाई

**राकेश कुमार बैरवा, रुप सिंह एवं महेन्द्र सिंह**
प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

खाद्यान्न फसलों में गेहूं के बाद चावल एक महत्वपूर्ण फसल है जो कि विश्व की आधी से अधिक आबादी के लिए मुख्य भोजन है। परंपरागत तरीके से धान की खेती करने के लिए समय पर नर्सरी तैयार करना, खेत में पानी की उचित व्यवस्था करके पडलींग (गरड) करना व अंत में मजदूरों द्वारा मुख्य खेत में रोपाई करने की आवश्यकता होती है। इन सब कार्यो में किसान की उत्पादन लागत बढ़ जाती है। वर्तमान परिस्थितियों में धान की खेती में उत्पादत लागत, पानी की बढ़ती हुई समस्याएं एवं मजदूरों की कमी को देखते हुए धान की ऐरोबिक/सीधी बुवाई तकनीकी द्वारा मृदा में पडलिंग (गरड) किए बिना ही धान की बुवाई सीडड्रिल अथवा हल द्वारा उरकर लाइनों में की जाती है। इस पद्धति में श्रम एवं पानी की बचत के साथ–साथ सफल उत्पादन किया जा सकता है। फसल जमने के बाद आव यकता पड़ने पर कतारों में गेप फिलिंग एवं थिनिंग का कार्य किया जाता है। इस विधि में मिट्टी की भौतिक दिशा नहीं बिगड़ती है तथा आगामी रबी में फसलों की अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है क्योंकि एरोबिक धान उत्पादन में फसल के पकने में 8–10 दिन कम लगते हैं।

## खेत का चुनाव व तैयारी

धान की खेती के लिए पानी रोकने की अच्छी क्षमता वाली चिकनी दोमट भूमि का चुनाव करें पर्याप्त नमी होने पर पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और बाद में 1–2 बार देशी हल या ट्रेक्टर चलित कल्टीवेटर या हेरों से जुताई करके खेत अच्छी तरह तैयार करें। जून के पहले सप्ताह में पलेवा दे, जिससे खेत की मिट्टी समान रुप से बुवाई हेतु उपयुक्त हो जाये।

## उन्नत किस्में

धान की सीधी बुवाई हेतु कोई विशेष किस्म नहीं होती जो भी किस्में परम्परागत विधि में बुवाई हेतु काम में ली जाती है, उन किस्मों को सीधी बुवाई हेतु काम में लिया जा सकता है। जो निम्न प्रकार है– पूसा बासमती 1692, पूसा बासमती 1718, पूसा बासमती–1509, पूसा सुगंधा–4 पूसा सुगंधा–5, इम्प्रुव्ड पूसा बासमती–1, प्रताप सुगंधा–1 किस्में उपयुक्त है।

## बीज की मात्रा व बीज उपचार

सीधी बुवाई हेतु 30 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। बुवाई से पूर्व धान के बीजों का उपचार अति आवश्यक है। सबसे पहले बीज को 8–10 घंटे 2 प्रतिशत नमक के घोल में भिगोकर उसमें ऊपर तैरते हुये बीजों को निकाल देवें और नीचे बैठे बीजों को साफ पानी से धोकर छाया में सुखाने के बाद बुवाई के काम लेवे। बुआई से पूर्व धान के बीज को टेबूकॉनाजोल 1 मिलीग्राम प्रति कि.ग्रा. या कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम प्रति कि. ग्रा. से उपचार करना चाहिऐ।

## बुवाई का समय

धान की सीधी बुवाई हेतु सबसे उपयुक्त समय 15 से 30 जून है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 सेंटीमीटर व बीज को 2 से 3 सेंटीमीटर की गहराई पर डाले। ज्यादा गहराई पर बीज डालने पर अकुंरण पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है । गेहूँ फसल बोने में काम में ली जाने बीज मशीन से धान की बुवाई की जा सकती है।

## उर्वरक प्रबंधन

सामान्यतः सीधी बुवाई वाली धान में प्रति हेक्टेयर 100–120 किलोग्राम नत्रजन, 60 किलोग्राम फास्फोरस एवं 40 किलोग्राम पोटाश की आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस व पोटाश की संपूर्ण मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करना चाहिए इसके बाद नत्रजन की शेष मात्रा दो बराबर हिस्सों में कल्ले फूटते समय तथा बाली निकलने के पूर्व देवे। जिंक की कमी वाले क्षेत्रों में 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर अंतिम जुताई के समय खेते में मिलाये।

## सिंचाई प्रबंधन

धान की सीधी विधि द्वारा बुवाई करने पर 50 प्रतिशत पानी की बचत होती है। धान की सीधी बुवाई के समय खेत में उचित नमी होना जरुरी है। अगर सूखी मृदा में धान की बुआई की गई है तो बुआई के 12 घंटे के अंदर हल्की सिंचाई देनी चाहिए। फसल के जमाव (लगभग 20 से 25 दिन) तक हल्की सिंचाई के द्वारा खेत में नमी बनाए रखना चाहिए। सीधी बुवाई वाले धान के खेत में पानी सूखने पर बड़ी–बड़ी दरारें नहीं पड़ती है। अतः इन खेतों में महीन दरार आने पर सिंचाई कर देनी चाहिए। कटाई से 15 से 20 दिन पहले सिंचाई बंद कर देनी चाहिए जिससे फसल की कटाई आसानी से हो सके।

## खरपतवार प्रबंधन

सीधी बुवाई वाले धान में खरपतवार पर नियंत्रण एक जटिल एवं गंभीर समस्या है। धान की बुवाई सूखे एवं नम मिट्टी में होने के कारण खरपतवार की बढ़वार के लिए उचित वातावरण मिलता है। अतः सीधी बुवाई वाले धान में खरपतवार पर नियंत्रण अत्याव यक है। अगर खरपतवार की उचित समय पर रोकथाम ना की जाए तो फसल की पैदावार व उसकी गुणवत्ता में कमी आ जाती है। प्रारंभिक खरतवार नियंत्रण के लिए बुवाई के बाद परन्तु अकुंरण से पहले प्री–इमरजेंसी खरपतवारनाशी पेण्डिमिथेलीन 1 किलोग्राम सक्रिय तत्व या बेन्थियोकार्ब 1.5 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें, उसके उपरांत बुवाई के 20 से 25 दिन बाद बिस्पाईरीबेक सोडियम 35 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

## गैप फिलिंग या खाली स्थान भरना

बुवाई के 25 से 30 दिन बाद जहां पर भी पौधों की संख्या ज्यादा है वहां से उखाड़कर सीधी कतारों में खाली स्थान पर रोप दें।

## कीट एवं रोग प्रबंधन

### जैसिड, थिप्स, प्लान्ट होपर व गंधीबग नियंत्रण

- कीट लगने पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 SL 250 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर या ऐसिटामेप्रिड 20 SP 250 ग्राम प्रति हेक्टेयर 500–600 ली. पानी में मिलाकर पौध लगाने या बुवाई के 30 से 35 दिन बाद दो तीन सप्ताह के अंन्तर पर आव यकतानुसार 2–3 बार छिड़काव करें। यह छिड़काव गंधी बग की रोकथाम में भी सहायक होता है।
- धान में तना छेदक व पत्ती लपेटक कीट के नियंत्रण हेतु प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. एक लीटर प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करे

तथा आवश्यकता पड़ने पर 15–20 दिन पश्चात् छिड़काव पुनः दोहरावें।

- छिड़काव करते समय पौधों की निचली सतह पर विशेष रुप से छिड़काव करें। छिड़काव करने से दो दिन पहले पानी सुखा देवे व छिड़काव के दो दिन बाद तक पानी न भरे तो अच्छे परिणाम मिलते है।
- यदि किसी कारणवश छिड़काव संभव न हो तो रोकथाम के लिये पौध जमने के बाद और खेत में पानी सूखने के बाद फिप्रोनील 0.3 : कण 20–25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से भुरके। इसी दवा की आव यकता होने पर 40 दिन बाद फिर भुरकें। इसके प्रयोग के 40 घण्टे बाद तक सिंचाई नहीं करें।
- गंधी बग का प्रकोप दाने की दूधिया अवस्था पर होता है। इसका प्रकोप होने पर फेनवरलेट 0.4 प्रतिशत चूर्ण प्रति हेक्टेयर की दर से भुरके।

**सैन्य कीट एवं शीर्ष लट्**

- ये कीट पौधों की नई पत्तियों और कलियों को काटते एवं कुतरते है। रोकथाम के लिये प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. एक लीटर दवा का छिड़काव करे। अगर छिड़काव संभव न हो तो फेनवरलेट 0.4 प्रतिशत चूर्ण 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से भुरके। ये कीट रात्रि में अधिक सक्रिय होते हैं और दिन में पौधों के निचले भागों में छुप जाते हैं। अतः इसकी रोकथाम हेतु भुरकाव या छिड़काव सायं 4 बजे से या सुबह 9 बजे तक करें।

**बीमारियों की रोकथाम**

**जीवाणु अंगमारी रोग:** यह रोग अधिक नम वातावरण में होता है। बीजोपचार द्वारा इसकी रोकथाम की जा सकती है। अगस्त माह के मध्य में वर्शा होने पर इस बीमारी के बड़ने की संभावना रहती है। रोकथाम के लिये कसूगामाइसीन 5 प्रतिशत. कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 45 प्रतिशत 1 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोलकर दवा का छिड़काव करें। यदि आवश्यकता हो तो 10–15 दिन बाद यह छिड़काव दोहरावें। रोगग्रस्त खेत से पानी को दूसरे खेतों में न जाने देवे।

**ब्लास्ट एवं पत्ती धब्बा रोग:** रोग की संभावना अगस्त के अन्त व सितंबर के शुरु में नम वातावरण बनने से अधिक हो जाती है। रोग का प्रकोप होते ही 2.0 किलो मैंकोजेब या 500 मिलीलीटर कीटाजीन प्रति हेक्टेयर के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करे। दूसरा छिड़काव 15 दिन के अन्तराल से करें। धान में ब्लास्ट व नेक ब्लास्ट की रोकथाम के लिए बीमारी के लक्षण दिखाई देते ही टेबूकोनाजोल 50 डब्ल्यू. पी. दवा का 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें तथा 15 दिन के अन्तराल पर दूसरा व तीसरा छिड़काव करें।

धान की फसल में आभासी कण्ड (फाल्स स्मट) रोग के नियंत्रण हेतु कॉपर हाड्रोक्साईड 77 डब्ल्यू. पी. 1.5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर 600 लीटर पानी में घोलकर प्रथम छिड़काव धान की बालियाँ निकलते समय एवं द्वितीय छिड़काव फसल की दूधिया अवस्था पर करें।

**जस्ते की कमी:** जस्ते की कमी से पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ कर ऊपरी भाग कत्थई रंग का हो जाता है। जिससे पौधों की बढ़वार रूक जाती है। रोकथाम हेतु 5 किलो जिंक सल्फेट तथा ढाई किलो बुझा हुआ चूना प्रति हेक्टेयर की दर से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़कें या चिलेटेक जिंक सल्फेट 2 ग्राम प्रति लीटर का घोल बनाकर छिड़कें।

**कटाई**

फसल के पकने पर जब दानों में नमी 15–16 प्रतिशत हो तथा दाने सख्त हो जाए तो धान की कटाई कर लेनी चाहिए।

**उपज**

सीधी बुवाई द्वारा धान की बुवाई करने पर 40–50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज प्राप्त हो जाती है।

**भंडारण**

भंडारण करने पूर्व दानों को अच्छी तरह धूप में सुखाने के उपरांत ही जब उसमें नमी की मात्रा 10 से 12 प्रतिशत रहे तभी भंडारण करें।

**धान की सीधी बुआई के लाभ**

**मजदूरी:** धान की सीधी बुआई मे पौध रोपण एवम नर्सरी तैयार नही की जाती अतः 50 प्रतिशत से भी ज्यादा मजदूरी लागत मे कमी आती है ।

**पानी:** धान की सीधी बुआई मे न तो गरड करनी पडती ओर न ही खेत मे पानी भरकर रखना पडता अतः 50–60 प्रतिशत पानी की बचत होती है।

वर्षा न होने की स्थिति मे सीधी बुआई वाली धान गरड द्धारा बोई धान से अधिक समय तक सही अवस्था मे रह सकती है। समय की बचतः धान की सीधी बुआई मे न तो गरड करनी पडती, न ही नर्सरी तैयार करना ओर न ही पौध रोपण करना पडता जबकि धान की सीधी बुआई गैहूँ बुआई मशीन से सीधे ही की जा सकती है अतः समय की बचत की जा सकती है ओर एक ही समय पर इच्छीत क्षैत्र मे बुआई की जा सकती है।

- सीधी बुआई वाली धान की फसल गरड वाली फसल की अपेक्षा 8 से 10 दिन पहले पक जाती है ।
- गरड वाली फसल के लिऐ गरड करने के बाद हाथो से डोलिया बनानी पडती है अतः समय व श्रम अधिक लगता है।
- गरड करने के दोरान ट्रेक्टर मे टूट फूट अधिक होती है अतः ट्रेक्टर के रखरखाव पर खर्च बढ़ जाता है ।
- सीधी बुवाई से मिथेन गैस का उत्सर्जन कम होता है।
- धान की सीधी बुआई वाली खेती करने पर 20000–25000 रूपये प्रति हेक्टेयर तक लागत में कमी/बचत की जा सकती है।

**धान की सीधी बुआई मे मुख्य समस्याऐं**

- उपयुक्त पौधे की सख्या
- खरपतवारो का प्रकोप
- आइरन की कमी
- खाली दान

# मूंग की उन्नत उत्पादन तकनीक

**सुनीता पांडेय, अशोक कुमार मीणा, शालिनी पांडेय एवं मोती लाल मेहरिया**
कृषि अनुसन्धान केन्द्र, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर, मंडोर - 342 304, राजस्थान

मूंग खरीफ सीजन की अल्पावधि में पकने वाली एक मुख्य दलहनी फसल है। भारतवर्ष में मूंग की खेती 5.55 मिलियन हेक्टयेर क्षेत्रफल में की जाती है, जिसमें राजस्थान, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, ओड़िशा और बिहार प्रमुख राज्य है। राजस्थान मूंग की खेती के लिए अग्रणी राज्य है जो देश के कुल क्षेत्रफल का 46 प्रतिशत है। राजस्थान में मूंग की खेती नागौर, जोधपुर, पाली, सिरोही आदि जिलों में की जाती है। इसके दाने का प्रयोग मुख्य रूप से दाल के लिये किया जाता है जिसमें 24–26 प्रतिशत प्रोटीन, 55–60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट एवं 1.3 प्रतिशत वसा होता है। दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ो में गठाने पाई जाती है जो कि वायुमण्डलीय नत्रजन का मृदा में स्थिरीकरण करती है, जिससे भूमि में जैविक कार्बन का अनुरक्षण होता है एवं मृदा की उर्वराशक्ति बढाती है। मूंग की अच्छी पैदावार के लिए सिफारिश की गई उन्नत कृषि विधियां इस प्रकार है।

## जलवायु

मूंग की खेती वर्षा ऋतु में की जाती है। इसके लिए नम एंव गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी वृद्धि एवं विकास के लिए 25–32°C तापमान उपयुक्त होता है। पकने के समय साफ मौसम तथा 60 प्रतिशत आर्दता होनी चाहिये।

## भूमि का चुनाव एवं तैयारी

मूंग के लिए गहरी, जल निकास युक्त दोमट या हल्की मिट्टी अधिक उपयुक्त रहती है। भूमि क्षारीय नहीं होनी चाहिए। मूंग के लिए वर्षा होने पर खेत को एक या दो बाद आवश्यकतानुसार जोत कर तैयार करना चाहिए। अगर वर्षा का अभाव हो तो पलेवा कर दें एवं बत्तर आने पर खेत की जुताई कर पाटा लगाकर खेत को बुवाई के लिए तैयार करें।

## बुवाई का समय

जुलाई का प्रथम पखवाड़ा मूंग की बुवाई के लिए सबसे उपयुक्त है। बुवाई मानसून की वर्षा के साथ ही या वर्षा देरी से हो तो 30 जुलाई तक भी की जा सकती है। गर्मी में (साठी मूंग) बोये जाने वाले मूंग की बुवाई मार्च के प्रथम सप्ताह से अन्तिम सप्ताह तक अवश्य कर देनी चाहिए।

## उन्नत किस्में एवं विशेषताएं

**आर एम जी 268 (1990)** : खरीफ एवं जायद के लिये उपयुक्त यह किस्म 60–70 दिन में पकती है। पौधे मध्यम कद के तथा दाने चमकदार मध्यम आकार वाले होते हैं। इसकी फलियां पकने तक हरी तथा एक साथ पकती है। यह किस्म वेब ब्लाइट व पत्ती धब्बा रोग रोधी है तथा इसमें सूखा सहन करने की क्षमता है। इसकी उपज 10 क्विटंल प्रति हैक्टेयर होती है।

**आर एम जी 62 (1991)** : खरीफ एवं जायद ;तुओं के लिए उपयुक्त यह किस्म 65–70 दिन में पकती है। पौधे मध्यम ऊँचाई वाले एवं सीधे होते हैं, तथा बीज चमकदार व हल्के हरे रंग के होते हैं। यह किस्म सूखे तथा जालिका झुलसा रोग रोधी है तथा इसकी औसत उपज 10–12 क्विटंल प्रति हैक्टेयर होती है।

**आर एम जी 344 (2001):** पौधे मध्यम कद के तथा सीधे खड़े रहते हैं। यह किस्म भी 65–70 दिन में पकती है। इसकी फलियां समूह में एक साथ पकती हैं तथा दाने चमकदार, हरे रंग के छोटे से मध्यम आकार वाले होते हैं। यह किस्म वैब ब्लाइट व पत्ती धब्बा रोग रोधी है तथा इसमें सूखा सहन करने की क्षमता होती है। फलियां पकने तक हरी रहती है और इसकी औसतन पैदावार 8–10 क्विटंल प्रति हैक्टेयर होती है।

**जी एम 4 (2001):** यह किस्म 61– 68 दिन में पक जाती है । इसके पौधे मध्यम कद के, ऊंचे व सीधे होते हैं तथा इसकी फलियां एक साथ पकती है इसके दाने हरे रंग के तथा बड़े आकार के होते हैं। इसकी औसत उपज 13–14 क्विटंल प्रति हैक्टेयर है।

**एस एम एल 668 (2002):** इसकी पत्तियां चौड़ी तथा गहरे रंग की होती है। फलियां लम्बी, मोटी तथा झुकावदार तथा पकने पर गहरे भूरे रंग की हो जाती है। इसके दाने सुड़ोल तथा बड़े आकार के होते है। इसकी औसत उपज 7–8 क्विटंल प्रति हैक्टेयर है।

**एम एच 2–15 (2008):** चौधरी चरण सिंह कृषि विश्वविद्यालय, हरियाणा हिसार द्वारा विकसित यह किस्म लगभग 60 दिनों में पक्कर प्रति हैक्टेयर 7–8 क्विटंल तक उपज दे देती है। यह किस्म पीत मौजेक बीमारी के प्रति भी मध्यम प्रतिरोधी पाई गई है।

**आई पी एम 02–3 (2009):** सिंचित एवं असिंचित क्षेत्रों ही लिये उपयुक्त यह किस्म 62 से 68 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। पीत मौजेक बीमारी के प्रति प्रतिरोधी यह किस्म लगभग 7 –8 क्विटंल प्रति हैक्टेयर उपज देती है।

**एम एच–421 (2014):** यह किस्म 60 से 65 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इस किस्म के दाने चमकीले व मध्यम मोटाई के तथा 100 दानों का औसत वजन लगभग 4.5 ग्राम होता है। यह किस्म लगभग 12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज देती है।

**जी ए एम –5 (2015):** आनन्द कृषि विश्वविद्यालय, गुजरात द्वारा विकसित यह किस्म 65–70 दिनों में पक जाती है । इसका पौधा अर्ध सीधा, दाना बड़ा व चमकदार तथा एक फली में 10–12 दाने होते है । पीत मौजेक बीमारी के प्रति उच्च प्रतिरोधी यह किस्म 9–11 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज देती है।

**आर एम जी–975 (2016):** इस किस्म को केशवानन्द मूंग–1 के नाम से भी जाना जाता है। यह 65–70 दिनों में पक जाती है। फलियाँ लम्बी, झुकावदार तथा पकने पर भूरे काले रंग की हो जाती हैं। यह किस्म नमी के तनाव के प्रति सहिष्णु एवं पीत शिरा मोजेक रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी है। इसके दाने चमकदार हरे रंग के व छोटे आकार के होते है। इसकी औसत उपज 9–10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

**जी एम –6 (2018):** यह किस्म जायद व खरीफ दोनों ऋतुओं के लिए उपयुक्त तथा दाने बडे आकार के और 100 दानों का वजन 4–5 ग्राम

होता है। यह किस्म 70–75 दिन में पक जाती है तथा इसकी उपज 11–12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। यह किस्म पित्त वायरस रोग एवं पर्ण कुंचन के लिए प्रतिरोधी है ।

**बीज दर**

मूंग अकेले बोने पर 15–20 किलो बीज प्रति हैक्टेयर और मिश्रित फसल के रूप में 8–10 किलो प्रति हैक्टेयर बीज काम में लेवें । कतारों के बीज की दूरी 30 सेंटीमीटर और पौधे से पौधे की दूरी 8–10 सेंटीमीटर रखे ।

**बीजोपचार**

बीज को 3 ग्राम थाईरम या 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम (50 डब्ल्यू पी) प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। मूंग में रस चूसक कीटों की रोकथाम के लिए बीज को 5 मि.ली. इमिडाक्लोप्रिड 48 एफ. एस. प्रति किलो बीज से उपचारित करें। तत्पश्चात् बीजो को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करें।

**खाद व उर्वरक**

मूंग के लिए प्रति हेक्टयेर नत्रजन 10–15 किलो व फॉस्फोरस 30–40किलों बुवाई से पहले उर कर देवें। खड़ी फसल में फूल आने के समय एन.पी.के. (18:18:18) का 2 प्रतिशत अथवा जीवामृत (10 प्रतिशत ) घोल का पर्णीय छिड़काव करे या यूरिया 2 प्रतिशत + सेलिसाइलिक अम्ल ७५ पी. पी. एम. का छिड़काव करे। मूंग में $GA_3$ 30 PPM की दर से फूल आना शुरू होने पर पर्णीय छिड़काव करने से उपज में सार्थक वृद्धि पाई गई।

**सिंचाई**

ग्रीष्मकालीन मूंग को 4 से 5 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। वर्षा ऋतु की फसल में भी अगर समय पर वर्षा न हो तो दो सिंचाईयां करनी चाहिए।

**खरपतवार नियंत्रण**

बुवाई के 18–20 दिनों के बाद इमाँझिथापर खरपतवार नाशी का 50 ग्राम अथवा इमाँझिथापर + इमेजामॉक्स (प्री–मिक्स) खरपतवार नाशी का 60 ग्राम अथवा सोडियम एसीफ्लुरफेन 16.5 प्रतिशत + क्लोडिनाफोप प्रोपार्जिल 8 प्रतिशत खरपतवार नाशी का 187.5 ग्राम प्रति हेक्टेयर के हिसाब से पानी में घोलकर छिड़काव करें। तत्पश्चात् 35–40 दिन की फसल अवस्था पर एक निराई गुड़ाई करें।

**फसल सुरक्षा**

**प्रमुख रोग एवं निदान**

राजस्थान में मूंग फसल के प्रमुख रोग अल्टरनेरिया पर्ण धब्बा, एंथ्रेक्नोज, जीवाणु चित्ती, सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा, छाछ्या व पत्ती मोड़न है। इसके लक्षण व निदान के लिए ध्यान देने योग्य बातें निम्नलिखित है।

**अल्टरनेरिया पर्ण धब्बा रोग :** पत्ती की सतह पर भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते है। प्रारंभिक अवस्था में ये धब्बे गोल एवं छोटे भूरे रंग के होते है, बाद में ये छल्ले के रुप में गहरे भूरे रंग का आकार ले लेते है। संक्रमित भाग पत्ती से अलग होकर गिर जाता है। रोगजनक के बीजाणु रोगजनित पौधो के अवशेष एवं ठुण्ठ पर तथा आश्रित खरपतवारों पर जीवित रहते है। इनकी बढ़वार के लिये 70 प्रतिशत आपेक्षिक आद्रता एवं 12 से 25 डिग्री तापमान उपयुक्त होता है।

**नियंत्रण :**

- खेतों को साफ–सुथरा रखे।
- थायरम 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से बीजोपचार करें।
- फसलों में जिनेब 2 ग्राम प्रति लीटर के हिसाब से छिड़काव करें।

**एंथ्रेक्नोज (श्याम वर्ण रोग) :** इस रोग के कारण उत्पादन में लगभग 24 से 64 प्रतिशत तक की कमी आती है। बादल युक्त मौसम के साथ–साथ उच्च आर्द्रता व 26 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान इस रोग का प्रमुख कारक है। यह रोग बीज पत्र तथा तना पत्ती एवं फलियों पर होता है। संक्रमित भाग पर अनियमित आकार के भूरे धब्बे लालिमा लिये हुये दिखाइ देते है जो कुछ समय बाद गहरे रंग के हो जाते है।

**नियंत्रण :**

- संक्रमित पौधों को नष्ट कर दें। बीजों को बोने से पूर्व केप्टान अथवा थायरम (2.5 ग्राम) वाविसिटीन (1.5 ग्राम) प्रति किलो बीज दर से उपचारित कर बोएं।
- फसल चक्र अपनाये।
- स्वस्थ बीज का उपयोग करें।

**जीवाणु चित्ती रोग** : पत्ती की सतह पर बहुत सारे भूरे रंग के सूखे हुये धब्बे दिखाई पड़ते है। प्रकोप बढ़ने पर ये धब्बे पूरी पत्ती पर फैल जाते है। पत्ती की निचली सतह पर देखने पर ये धब्बे लाल रंग लिये होते है। इसका प्रभाव तने एवं फलियों पर भी देखा जा सकता है।

**नियंत्रण :**

- एग्रीमाईसीन 200 ग्राम या दो किलोग्राम ताम्रयुक्त फफूंदनाशी या प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें आवश्यकतानुसार छिड़काव दोहरावें।

**सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग :** इस रोग के लक्षण छोटे–छोटे धब्बों के रुप में पत्ती की सतह पर देखे जा सकते है। ये धब्बे हल्के भूरे रंग के तथा इनका किनारा लाल–भूरा रंग लिये हुये होता है। ये धब्बे फलियों एवं शाखाओं पर भी देखे जा सकते है। प्रकोप अधिक होने पर ये धब्बे पूरे पौधों में फैल जाते है एवं पत्ती सिकुड़ कर छोटी हो जाती है।

**नियंत्रण :**

- रोग प्रतिरोधी किस्मों को उगाये।
- मूंग के साथ अंतवर्ती फसले जैसे अधिक ऊचाई वाले अनाज एवं मिलेटस लगायें।
- मल्च का इस्तेमाल करें।
- कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत (एक ग्राम प्रति लीटर पानी) अथवा पाइराक्लोस्ट्राबिन 133 जी + एपॉक्सीकोनाजोल 50 जी के पूर्व मिश्रित उत्पाद का 1.5 मिली प्रति लीटर अथवा ट्राईफलोक्सीस्ट्रोबिन 25 प्रतिशत + टेबुकोनाजोल 50 प्रतिशत के पूर्व मिश्रण का 1 ग्रम प्रति लीटर पानी के साथ पर्णीय छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15 दिन के बाद छिड़काव दोहराएं।

**छाछ्या या भभूतिया रोग** :– दलहनी फसलों के प्रमुख रोगों में से चुर्णिल आसिता है। पत्ती की ऊपरी सतह पर सफेद पावडर के समान संरचना दिखाई देती है जो कि बाद में मटमैले रंग में बदल जाती है। ये सफेद पावडर तेजी से बढ़ते है और पत्ती की निचली सतह पर आवरण के रुप में फैल जाते है। बिमारी का प्रकोप बढ़ने पर ये सफेद पावडर जैसे संरचना

पत्ती की दोनों तरफ की सतह पर दिखने लगते है। पत्तीयाँ असमय झड़ने लगती है मौसम अनुकुल होने पर इस तरह के लक्षण पत्ती के अतिरिक्त शाखाओं एवं फलों में दिखने लगते है।

**नियंत्रण**

- प्रति हेक्टेयर ढाई किलो घुलनशील गन्धक अथवा डायनोकेप एक लीटर का पहला छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देते ही एवं दूसरा छिड़काव 10 दिन के अन्तराल पर करें अथवा 25 किलो गन्धक चूर्ण भुरकाव करें।

**पीला चित्रवर्ण या पीला मोजेक रोग :** शुरूआती लक्षण में पीले छोटे धब्बे नयी पत्ती पर फैले हुये दिखाई देते है बिमारी फैलने पर ये धब्बे बड़े आकार के होकर पूरी पत्ती को पीला कर देते है। पौधों की बढ़वार रूक जाती है। फूल एवं फली की संख्या कम हो जाती है फली आकार में छोटी एवं पीला रंग लिये हुये होती है।

**नियंत्रण**

- यह बीमारी सफेद मक्खी द्वारा फैलती है अतः इसे रोकने हेतु कीटनाशी दवा जैसे डायमिथोएट 30 ई. सी. एक लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें । आवश्यकतानुसार 15 दिन के अन्तराल पर फिर छिड़काव करें ।

**लीफकर्ल (पत्ती मोड़न):** इसके लक्षण सामान्यतः फसल बोने के 3 से 4 सप्ताह में दिखने लगते हैं। इस रोग में दूसरी पत्ती बड़ी होने लगती है, पत्तियों में झुर्रियां व मरोड़पन आने लगता है। संक्रमित पौधों को खेत में दूर से ही देखकर ही पहचाना जा सकता है। इस रोग के कारण पौधे का विकास रुक जाता है, जिससे पौधे में नाम मात्र की फलियां आती हैं । यह रोग पौधे की किसी भी अवस्था में अपनी चपेट में ले सकता है।

**नियंत्रण**

- यह विषाणु जनित रोग है जिसका संचरण कार्य थ्रिप्स द्वारा होता है। थ्रिप्स के लिये एक ग्राम एसीफेट या 2 मिली लीटर डाइमेथोएट प्रति लीटर के हिसाब से छिड़काव करें। फसलों की समय पर बुवाई करें।

**समन्वित रोग प्रबंधन**

बुवाई पूर्व ट्राइकोडर्मा विरिडी 5 ग्राम, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस 5 ग्राम /किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें तथा साथ ही 250 किलोग्राम नीम की खली भूमि में मिलावें तथा पाइराक्लोस्ट्राबिन 133 g/l + इपॉक्सीकोनाजोल 50 g/l का 1.5 ग्रम प्रति लीटर पानी की दर से पर्णीय छिड़काव करें।

**पीत शिरा मोजेक रोग**

जीवाणु चित्ती रोग

चूर्णिल आसिता रोग

सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग

झुलसा रोग

**मूंग के प्रमुख रोग**

**प्रमुख कीट एवं निदान**

राजस्थान में मूंग फसल के प्रमुख कीट सफेद मक्खी, हरा तेला, मोयला, थ्रिप्स, फली छेदक, तम्बाकू सूंडी आदि है।

**सफेद मक्खी**

व्यस्क सफेद मक्खी व इनके निम्फ पत्ती की सतह से रस को चुसकर पौधे को कमजोर कर देते है। प्रभावित पौधे मुरझाकर नीचे झुकने लगते हैं। कई बार पूरा पौधा ही मर जाता है। ये कीट पत्तियों पर एक चिपचिपे पदार्थ का श्रावण करते है जिस पर काले रंग के फफूंद जमा हो जाने के कारण प्रकाश संश्लेषण क्रिया की दर में कमी आ जाती है। सफेद मक्खी विभिन्न विषाणु रोगों का वाहक है जिसमें मूंग येलो मोजेक विषाणु प्रमुख है।

**तेला :** ये कीट पत्तियों का रस चूसता है फलस्वरूप पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती है।

**मोयला** : निम्फ तथा व्यस्क दोनों ही पौधों के कोमल भागो से रस चूस कर नुकसान करते है। कीट ग्रसित पौधों की पत्तियां मुड जाती है। यह कीट बहुत से विषाणु जनित रोगों का भी वाहक है।

**थ्रिप्स** : इसके निम्फ तथा वयस्क कीट दोनों ही पुष्प के अन्दर कलंगी पर नुकसान करते है। थ्रिप्स के प्रकोप से पुष्प खिलने से पहले गिरने लगते है। ज्यादा प्रकोप होने पर पौधा झाड़ीनुमा हो जाता है एवं फलियाँ बहुत कम बनती है ।

**तम्बाकू सूंडी** : यह सर्वभक्षी कीट है, छोटी सूंडी समूह में एक ही पत्ती व पौधे को खाती हैं, धीरे– धीरे पत्ती के सम्पूर्ण हरे भाग को खा जाती हैं, जिससे पतियाँ सफेद जालीदार दिखाई देती है। जैसे–जैसे सूंडी बड़ी होती है सारे खेत में फैलने लगती है तथा पौधे की पत्तियों, कोमल तने व शाखाओं को खाकर नुकसान पहुचाती हैं।

**फली छेदक :** यह कीट मूंग सहित बहुत सी फसलों का एक मुख्य हानिकारक कीट है। इसकी सूंडी पौधे की पत्तियों पर गोल छेद कर देती है। बाद में फूलों एवं फलियों को खाकर नुकसान पहुचाती है। इसकी लट

का आधा भाग फली के अन्दर तथा आधा फली के बाहर रहता है तथा इसी प्रकार बीज को खाती रहती है।

**चित्तीदार फली छेदक :** यह फली छेदक अति हानिकारक कीट है। कीट नुकसान की प्रारम्भिक अवस्था में पत्तियों, पुष्प कलिका तथा पुष्प का जाल बुनकर अन्दर ही अन्दर खाकर नष्ट करता है। फली बनने पर फली को नुकसान करता है।

**ब्लीस्टर भृंग :** बड़े आकर का काले रंग का कीट है, जिस पर नारंगी या लाल रंग की पट्टिया होती है। यह कीट भारी संख्या में फसल में फूल आने के समय आक्रमण करते है व फूलो को खाकर फसल को भारी नुकसान पहुचाते है।

**समेकित नाशीकीट प्रबंधन**

- हानिकारक कीटों व पादप रोगों की सही जानकारी के लिए तथा उन्हें समय से नियंत्रण करने के लिए खेतों का समय–समय पर निरीक्षण करना चाहिए।
- गर्मियों में भूमि की गहरी जुताई करनी चाहिए जिससे भूमि के अन्दर उपस्थित कीटों के कोषकों को नष्ट किया जा सके।
- कीट प्रतिरोधी प्रजातियों के बीजों के साथ समय से बुवाई करनी चाहिए।
- उपयुक्त फसल चक्र के साथ ही खेती करनी चाहिए।
- कीट की उपस्थिति की जानकारी के लिए पांच फेरोमॉन ट्रेप/ हे. लगाने चाहिए। रात के समय खेतों में प्रकाश प्रपंच लगाकर व्यस्क कीटों को आसानी से आकर्षित कर नष्ट किया जा सकता है तथा एफिड् के लिए पीले चिपचिपे ट्रैप का उपयोग कर कीट को नियंत्रित किया जा सकता है।
- कीट के अंडो वाली पत्तियों को इकट्ठा कर तथा समूह मे उपस्थित नवजनित सूंडियों से प्रभावित पौधों को उखाड़कर जमीन मे दबा देना चाहिए।
- मित्र कीटों जैसे–टीलेनोमस रेमस, ट्राइकोग्रामा, अपेन्टेलिस व अन्य मित्र कीटों के संरक्षण हेतु फसल के साथ अंत: फसल लेनी चाहिए।
- टी आकार की खुटियाँ कीटभक्षी पक्षियों के बैठने के लिए 20/हे. की दर से लगानी चाहिए जिससे कीटभक्षी पक्षी कीट की सूंड़ी को खाकर नष्ट कर सकें।
- SlNPV/HaNPV या बेसिलस थूनजैसिस के फॉर्मुलेशन का छिड़काव तम्बाकू सूंडीध्फली छेदक सूंडी की प्रारम्भिक अवस्था में करना चाहिए।

- **मोयला, हरा तेला व सफेद मक्खी का रासायनिक प्रबंधन :** पीले मोजेक के विषाणुओं को फसल में फैलाने वाले तथा रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए मैलाथियॉन 50 ई.सी. या डायमिथोएट 30 ई.सी एक लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. का 150 मिली लीटर प्रति हैक्टेयर अथवा फ्लोनीकामिड 50 प्रतिशत डब्ल्यु जी. का 200ग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें तथा आवश्यकता होने पर दूसरा छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें।

- **फली छेदक का रासायनिक प्रबंधन :–** फूल व फली आते ही मैलाथियॉन 50 ई.सी. या क्यूनॉलफॉस 25 ई.सी. एक लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें या इंडोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. 500 मिली प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें। आवश्यकता हो तो 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव दोहरावें।

- **रस चूसक कीडे का रासायनिक प्रबंधन :** इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. का 150 मिली लीटर प्रति हैक्टेयर अथवा फ्लोनीकामिड 50 प्रतिशत डब्ल्यु जी. का 200 ग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें तथा आवश्यकता होने पर दूसरा छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें या लेकानिसिलियम लेकेनी का 10 ग्राम प्रति लीटर पानी के साथ पर्णीय छिडकाव करें।

**कटाई व गहाई**

मूंग की फलियों से दाने पकने के तुरन्त बाद झड़ना शुरू कर देते हैं। अत: फसल के पकते ही कटाई करें। फसल को एक सप्ताह से 10 दिन तक खलिहान में भली–भाँति सुखाकर व गहाई कर दाना निकालना चाहिए।

**उपज**

उन्नत विधियां अपना कर मूंग की औसत उपज 8–10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर प्राप्त की जा सकती है। दानों को अच्छी तरह धूप में सुखाने के उपरान्त ही जब उनमें नमी की मात्रा 8–10 प्रतिशत रहे तभी भण्ड़ारण करें।

**अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु सुझाव :**

- स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज का उपयोग करें।
- सही समय पर बुवाई करें, देर से बुवाई करने पर उपज कम हो जाती है।
- बीजोपचार अवश्य करें जिससे पौधों को बीज एवं मृदा जनित बीमारियों से प्रारंभिक अवस्था में प्रभावित होने से बचाया जा सके।
- मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित उर्वरक का उपयोग करे ।
- उचित समय पर खरपतवार नियंत्रण एवं पौध संरक्षण करें।

# मीठी मक्का को उगाने की तकनीक, इसके उपयोग एवं गुण

हितेश गेनण, राम किशन मीणा, एम. सी. जैन एवं अनुज कुमार

मक्का विश्व के लगभग सभी देशों में उगाई जाने वाली फसल हैं जो कि विश्व के सकल खाद्यान्न उत्पादन में एक चौथाई से भी ज्यादा का योगदान है। विश्व के कुल मक्का उत्पादन में भारत का 2 प्रतिशत योगदान है। अमेरिका, चीन एवं ब्राजील के बाद भारत का 4 वाँ स्थान हैं। मक्का भारतवर्ष के लगभग सभी क्षेत्रों में उगायी जाती हैं। मक्का मुख्यतया राजस्थान, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, बिहार, हिमाचल प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर तथा उत्तरी पूर्व राज्यों में उगाई जाती है। मक्का को खाद्यान्न फसलों की रानी भी कहा जाता है क्योंकि इसकी उत्पादन क्षमता खाद्यान्न फसलों में सबसे अधिक है। मक्का एक ऐसी फसल है जो विविध परिस्थितियों, जलवायु, मृदा आदि में पूरे वर्ष भर विभिन्न मौसम में उगाई जा सकती है अपितु यह विविध उपयोगों जैसे दाना, भुट्टा, बेबीकॉर्न, पॉपकॉर्न, चारा आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली विविधता वाली फसल है। ।मक्का के भुट्टे को दूधिया अवस्था में तोडक़र काम लिया जाता है इसलिए इसे मीठी मक्का (स्वीट कॉर्न) भी कहते हैं। मीठी मक्का की फसल को परागण के 20 से 22 दिन बाद भुट्टा की तोड़ाई कर लेते है। स्वीट कश्र्वन की खेती वर्ष भर की जा सकती हैं। ये फसल कम समय में तैयार हो जाती है। अतः इससे कम समय में अधिक लाभ कमाया जा सकता हैं। मीठी मक्का के भुट्टे बाजार में काफी महंगे बिकते हैं अतः किसान इसकी खेती कर अधिक मुनाफा एवं पौष्टिक हरा चारा प्राप्त कर सकता है।

**भू**

मी

नि

इसके लिए उपयुक्त नहीं होती हैं। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके 2–3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करने के तत्पश्चात पाटा लगाकर खेत को समतल कर लिया जाता है। अंतिम जुताई के समय 15–20 गाड़ी अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर खेत मे डालकर भूमि में भली भाँति मिला देते हैं।

**बीज दर एवं बीजोपचार**

मीठी मक्का का बीज हल्का होने के कारण 8 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। अगर अच्छा अंकुरण चाहिए तो बीजों को रात भर पानी में भिगो कर तथा सुबह छाया में सुखाकर बोने से अंकुरण जल्दी हो जाता है। फसल को मृदा व बीज जनित बीमारियों से बचाव हेतु बीज को थाइरम 2.5–3.0 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से अथवा 4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज को एप्रोन 35 एसडी नामक कवकनाशी से उपचारित कर बोयें जिससे पौधों में रोग प्रतिरोधी क्षमता बढ़ती है। बीजों का उपचार क्लोरोपायरीफॉस 20 ईसी की 5 मिली लीटर या थायोमेथोक्सम 25 ईसी की 6 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें, इससे दीमक तथा तना छेदक कीटों से पौधों की प्रारम्भिक सुरक्षा होगी। अगर बीजों को ट्राइकोडर्मा 5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से भी उपचरित कर बुवाई करें तो रोगों एवं कीटों से पौधों की प्रारम्भिक सुरक्षा होगी।

**बुवाई का समय एवं बुवाई की विधि**

वैसे तो मीठी मक्का की बुवाई दिसम्बर एवं जनवरी माह को छोड़ कर वर्षभर की जा सकती है। लेकिन अच्छा उत्पादन लेने हेतु खरीफ के मौसम में जून–जुलाई एवं रबी में 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर के मध्य का समय उचित रहता है। मीठी मक्का की बुवाई छिड़क कर, कतारों, एवं मेढ़ों पर करते है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 से 75 सेमी एवं पौधे से पौधे के दूरी 20 से 25 सेमी. रखे, जिससे तुड़ाई में सुविधा रहती है। बीज को 4–5 सेमी गहराई पर बोयें।

**उर्वरक प्रबंधन**

मीठी मक्का का अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए के लिये नत्रजन 90–100 किग्रा, फास्फोरस 60–80 किग्रा, पोटेशियम 40–60 किग्रा एवं जिंक सल्फेट 25 किग्रा प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। तथा हड़ोती क्षेत्र मे नत्रजन 90 किग्रा, फास्फोरस 30 किग्रा एवं जिंक सल्फेट 25 किग्रा प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। इसमें से नत्रजन की आधी मात्रा, फास्फोरस, पोटेशियम व जिंक सल्फेट की पूरी मात्रा बुवाई के समय 10–15 सेमी की गहराई पर कतारों में ऊर कर दें। नत्रजन की शेष आधी मात्रा को 2–3 बार अलग–अलग अवस्थाओंपर दें, जैसे कि पौधे की 8 पत्ती एवं पुष्पन अवस्था।

**खपतवार प्रबंधन**

मीठी मक्का की फसल तीनों ही मौसम में खरपतवारों से प्रभावित होती है। समय से खरपतवार नियंत्रण न किया जाए तो उपज में 40–50 प्रतिशत तक कमी हो सकती है। बुआई से 30–45 दिन तक क्रांतिक समय माना जाता है। मक्का में प्रथम निराई 3–4 सप्ताह बाद में करें, उसके 1–2 सप्ताह बाद बैलों से डोरा चला कर कतार के बीच की भूमि खोल देने से लाभ होता है। प्रारंम्भिक 30–40 दिनों तक एक वर्षीय घास व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु एट्राजिन नामक खरपतवारनाशी 1.0 किलो सक्रिय तत्व को 600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के तुरंत बाद खेत में छिडकें। छिडक़ाव के समय मृदा सतह पर पर्याप्त नमी का होना अतिआवश्यक होता है। इसके अलावा टैंबोट्रियोन 34.4 प्रतिशत एस. सी. नामक रसायन 120 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से 600 लीटर पानी में मिलाकर बोआई के 15–20 दिन बाद खेत में समान रूप से छिडक़ने से भी फसल में 30–40 दिन तक खरपतवार नियंत्रित रहते हैं। बाद में उगने वाले खपतवारों के लिये एक बार अन्तराशस्य क्रियाएं करके नियंत्रित किया जा सकता है।

**सिंचाई प्रबंधन**

खरीफ में यदि वर्षा न हो तो आवश्यकता अनुसार सिंचाई करें। लेकिन रबी के मौसम में 4–6 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। नरमंझरी आने व दाने में दूधिया अवस्था पर सिंचाई अवश्य करें।

**अंत: फसल**

मीठी मक्का के साथ में खरीफ में कम समय में पकने वाली फसल (सोयाबीन, मूंग एवं उड़द) बोई जा सकती हैं। इसके लिये मक्का की 30–30 सेमी पर दो कतार बोई जाती हैं तथा इसके बाद मूंग, उड़द या सोयाबीन की दो कतारें 30–30 सेमी पर बोयें। मक्का व अरहर को 1:1 कतार के अनुपात में बुवाई की जा सकती है। जिससे बोनस के रूप में अंतरवर्तीय फसल मिल जाती है एवं कीट–बीमारी का प्रकोप कम होता है।

**भुट्टों की तुड़ाई**

बीज अंकुरण के लगभग 45–50 दिनों के बाद नर मंजरी आती है और इसके 3–5 दिनों के बाद मादा मंजरी (सिल्क) आती है। खरीफ के मौसम में परागण के 15–20 दिनों के बाद मीठी मक्का के भुट्टों की तुड़ाई की जा सकती हैं। इस अवस्था की पहचान भुट्टे के ऊपरी भाग यानी सिल्क के सूखने से की जा सकती है या इस अवस्था में भुट्टे को नख से दबाने पर दूध जैसा– तरल प्रदार्थ निकलने लगता है। इसके बाद शर्करा स्टार्च में परिवर्तित होने लगती है जिससे मिठास व गुणवत्ता कम होने लगती है। भुट्टे की तुड़ाई सुबह या शाम करें। हरे भुट्टे को तोडने के बाद बचे हुए हरे पौधे को चारे के रूप में इस्तेमाल करें।

**भुट्टों की तुड़ाई उपरांत प्रबंधन**

भुट्टे को तुड़ाई के ठीक बाद संसाधन इकाई या मंडी में पहुंचा दें। भुट्टे को ढेर लगाकर नहीं रखें, बल्कि इसे लकड़ी के डिब्बे या कार्टून आदि में रखें। कमरे के तापमान पर 24 घंटे के अंदर मीठी मक्का के भुट्टे का 50 प्रतिशत या उससे अधिक भाग शर्करा के दूसरे रूप में बदल जाता हैं। अत: इन्हें हाइड्रोकुलिंग पैकेजिंग करके शीत गृह में रखा जाता हैं। भुट्टे को एक जगह से दूसरे जगह ले जाने में भी बर्फ की मदद से ठंडा करके रखें। भुट्टे को प्लास्टिक की ट्रे में भी रखकर ले जा सकते है।

**उपयोग**

मीठी मक्का को कच्चा या उबालकर खाया जाता हैं। यह सब्जी एवं अनेक तरह के पकवान जैसे स्वीट कॉर्न केक, स्वीट कश्वर्न क्रीम स्टाइल आदि बनाने में भी प्रयुक्त होता हैं। हरा भुट्टा तोडने के बाद पौधे को काटकर हरे चारे के रूप में उपयोग में लाया जा सकता हैं। इसकी अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अच्छी माँग होने के कारण डिब्बाबंदी करके निर्यात करके भी अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती हैं। उबले हुए मकई (स्वीट कॉर्न) से भरा गरमागरम कप या कोयले पर पकाया हुआ मकई (स्वीट कॉर्न) बरसात के दिन में लंबी सैर के लिए बहुत मजेदार हैं। यह जितना स्वादिष्ट होता है उतना ही स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद भी होता है। अपने अनोखे स्वाद, मीठेपन और सुगंध के लिए यह पूरी दुनिया में लोकप्रिय है। यह मक्के का हाइब्रिड रूप है और इसे शुगर कॉर्न के नाम से भी जाना जाता है। इसका वैज्ञानिक नाम ज़िया मेज एल. वेर. सेचेराटा है।

**मकई (स्वीट कॉर्न) के गुण :**

मकई (स्वीट कॉर्न) में बहुत सारे बायो एक्टिव तत्व होते हैं जिसके कारण इसमें निम्नलिखित गुण होते हैं :

- यह एंटीऑक्सीडेंट के रूप में काम करता है (शरीर में फ्री रेडिकल्स को बेअसर करता है)।
- यह ब्लड शुगर को नियंत्रित रखने में मदद करता है।
- यह शरीर में कार्बोहाइड्रेट, लिपिड और प्रोटीन के मेटाबॉलिज्म को नियमित बनाने में मदद करता है।
- यह स्वस्थ लाल रक्त कण के उत्पादन में मदद करता है।
- यह आंखों की रोशनी को बेहतर बनाने में मदद करता है।

## ''अभिनव कृषि'' अंकवार प्रकाशित होने वाली विषय सामग्री

| अंक | प्रकाशन माह | विषय–विशेषांक |
|---|---|---|
| 1 | जून | खरीफ फसल विशेषांक, खरीफ फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार प्रबंधन, मृदा एवं जल संरक्षण |
| 2 | सितम्बर | रबी फसल विशेषांक, रबी फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार प्रबंधन, उन्नत कृषि उपकरण |
| 3 | दिसम्बर | सिंचाई प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक खेती, समन्वित कृषि प्रणाली, आधुनिक डेयरी, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन |
| 4 | मार्च | जायद खेती, संरक्षित खेती, हाई–टेक बागवानी, फल–फूल, सब्जी उत्पादन, मृदा प्रबंधन, पशुपालन प्रबंधन, फल सब्जी परिरक्षण एवं खाद्य प्रसंस्करण |

# बायोगैस तकनीक: पर्यावरण संरक्षण का उपयुक्त माध्यम

**मीनाक्षी मीना, हेमराज मीना, टी.एस. चैत्रा एवं ओमप्रकाश मीना**

राजस्थान कृषि महाविद्यालय उदयपुर (राज.) एवं भा.कृ.अनु.प.–भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, अनुसंधान केन्द्र, कोटा (राज.)

**प्रस्तावना :** विश्व के अन्य विकास शील देशों की तरह ही भारत के निर्धन ग्रामीण अपने जीवन की प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मुख्यतः कृषि एवं इससे जुड़े कार्यो तथा उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों पर आश्रित हैं। स्थायी रूप से ग्रामीणों के निर्धनता उन्मूलन, रोजगार सृजन जीवन स्तर सुधार तथा जीविकोत्थान हेतू खाद्य–उत्पादन से, पर्यावरण एवं परिस्थितिकी के विविध पहलुओं तथा ऊर्जा–उपभोग के गहरे सम्बन्ध के कारण आज इनकी स्वीकार्यता एवं इनके प्रति जागरूकता बढ़ रही है। आनेवाली पीढ़ियों के लिए सीमित संसाधनों में स्थायी जीविकोपार्जन तथा सुरक्षित भविश्य के निर्माण में तकनीक एक धुरी की भूमिका निभा सकती है। वर्तमान में भारत में लगभग कुल 536 मिलियन पशुधन है। आम तौर पर इस पशुधन अपशिष्ट का उपयोग खाना पकाने के ईंधन के रूप में ग्रामीण परिवारों द्वारा किया जाता है, लेकिन अभी भी पशुधन अपशिष्ट को ग्रामीणों द्वारा पूर्ण रूप से उपयोग में नहीं लिया जा रहा है और अपशिष्ट का एक बहुत बड़ा हिस्सा व्यर्थ हो जाता है। जो कि बायोगैस संयंत्र द्वारा प्रभावी रूप से संसाधित किया जा सकता है। बायोगैस संयंत्र एक ऐसा संयंत्र है जो पशुधन अपशिष्ट का कुशलतापूर्वक प्रबंधन करता है और साथ ही साथ ग्रामीण भारत के लिए ऊर्जा का उत्पादन करता है। इस प्रौद्योगिकी के माध्यम से वनों की कटाई को रोका जा सकता है और पारिस्थितिकी संतुलन को प्राप्त किया जा सकता है। बायोगैस तकनीक स्थायी विकास एवं ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को कम करने का एक अच्छा माध्यम हो सकती है।

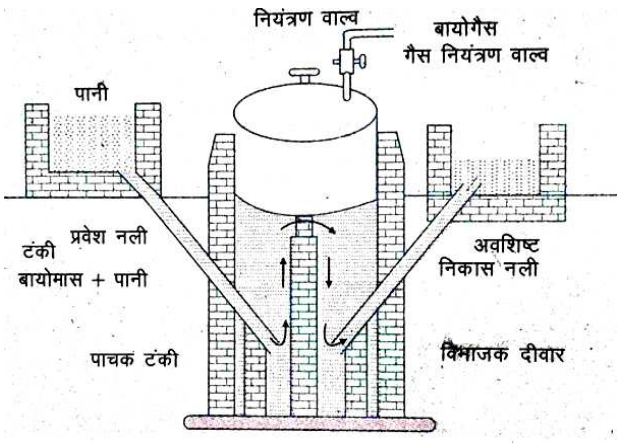

**बायो गैस क्यों ?**

- ईंधन की कीमत तेजी से बढ़ रही है।
- पुनः उपयोग किए जा सकने वाले संसाधन सीमित हैं।
- मीथेन हरितगृह प्रभाव पैछा करने वाली गैसें में से एक है।
- छोटे पैमाने पर स्थान लेकर इसका उत्पादन किया जा सकता है।
- स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री के इस्तेमाल वाली यह एक सरल और किफायती तकनीक है।

बायोगैस तकनीक को 'गोबर गैस' के नाम से जानते हैं क्योंकि इसके उत्पादन में पशुओं के गोबर का उपयोग किया जाता है। अवशिष्ट पदार्थो से ईंधन पैदा करने वाली यह विधि, अन्य विधियों की तुलना में सरल एवं किफायती है। तकनीकी रूप से बायोगैस किसी भी प्रकार के कार्बनिक पदार्थ, अधिकतर कार्बनिक अवशिष्ट से उत्पन्न की जा सकती है। इस अवशिष्ट में, कृषि एवं फसलों के अवशिष्ट, मानव तथा पशु के अवशिष्ट पदार्थ होते हैं। यह एक स्वच्छ तथा पर्यावरण–हितैशी तकनीक है। इसका कैलोरी मान लगभग 5000 किलो कैलोरी प्रति घनमीटर होता है।

**मूल धारणाओं को समझें**

**संगठन**

| | | |
|---|---|---|
| मीथेन गैस | : | 55–65 प्रतिशत |
| कार्बन डाइऑक्साइड | : | 30–40 प्रतिशत |
| अशुद्धियॉ | : | हाइड्रोजन, हाइड्रोजन सल्फाइड एवं नाइट्रोजन |

**संक्षिप्त उत्पादन प्रणाली :** इसका उत्पादन तीन अलग–अलग चरणों में पूरा होता है:–

1. **एन्जाइमेटिक हाईड्रोलाइसिस :** इस चरण में से सेल्यूलोजी पदार्थ वसा, मांड एवं प्रोटीन को सरल यौगिकों में तोड़ा जाता है।
2. **अम्ल निमार्ण :** इस चरण में एसीटिक अम्ल एवं वाष्शील ठोस में से सूक्ष्मजीवों को अलग किया जाता है। जटिल कार्बनिक यौगिक लघु कड़ियों वाले सरल कार्बनिक अम्ल तोडे जाते हैं।
3. **मीथेन का निर्माण :** कार्बनिक अम्ल इस चरण में जीवाणुओं द्वारा मीथेन एवं कार्बनडाइऑक्साइड में बदल दिए जाते हैं। यह किया पूर्णतः अनॉक्सी होती है। इन जीवाणुओं को मीथेन–निर्माता कहते है। कुशल पाचन के लिए इन अम्ल–निर्माताओं तथा मीथेन–निर्माताओं का एक गति–साम्य में रहना आव यक है। गैस–उत्पादन की कुशलता इसी साम्य पर निर्भर होती है।

**बायो गैस तकनीक का अनुप्रयोग**

**क. गृहस्थी तथा समुदायों के लिए**

- आकंलन के अनुसार पूरे भारत में 1.8 मिलियन से अधिक बायोगैस प्लांट लगाये गए हैं। यह अवशिष्ट पदार्थो के उपयोग से ताप पैदा कर, कृषि–उत्पादन को बढ़ा सकती है।
- दहन द्वारा पैदा ताप/ऊर्जा से बायोगैस द्वारा इनका उत्पादन अधिक कुशलता से होता है।
- इस तकनीक द्वारा, कृषि एवं पशुओं के अवशिष्ट भूमि में पुनः उत्तम कार्बनिक उर्वरक के रूप में वापस मिलाये जाते हैं।
- बायोगैस तकनीकी मानव मल के स्वच्छ निपटारे का एक सशक्त माध्यम है।

**ख. बिजली उत्पादन में**

- बायोगैस द्वारा बिजली उत्पादन भारत में नया हैं परन्तु इसका प्रचालन अब बढ़ रहा है।
- इसमें लागत पर अच्छी आय होती हैं, चूँकि मुख्य निविशिट अनिवार्यतः मुफ्त होती है।

**ग. उद्योगों में**

- उद्योगों तथा व्यवसायों में तो यह एक ऐसी युक्ति है जिसमें किफायती ढ़ंग से अवशिष्ट पदार्थो को नश्ट करने के दौरान ही ताप और, अथवा बिजली का भी उत्पादन होता रहता है।
- विशेष रूप से अनॉक्सी पाचन की उच्च क्षमता वाले उद्योगों में मवेशी एवं कुक्कुट उद्योग, चीनी, कागज, चमड़ा, फल एवं सब्जी आदि उद्योग प्रमुख हैं।

**भारत में बायोगैस तकनीक का भविष्य**

- भारत में इस तकनीक का भविष्य अत्यन्त उज्जवल है क्योंकि यहाँ की सरकार ऊर्जा उत्पादन के लिए नवीकरण योग्य संसाधनों के उपयोग के लिए अत्यन्त उत्सुक है।
- संसाधनों के कुशल उपयोग के प्रति लोगों की जागरूकता बढ़ाकर ही बायोगैस का उत्पादन और प्रचलन बढ़ाया जा सकता हैं।
- भारत के सभी स्तरों पर (घरेलू कार्य, नगर निगम तथा उद्योग) ताप पैदा करने एवं बिजली उत्पादन, दोनों के लिए बायोगैस के उपयोग में महत्वपूर्ण वृद्धि की आशा है।
- अनुमान है कि बायोगैस के उपयोग से भारत लगभग 17,000 मेगावाट विद्युत शक्ति पैदा कर सकता है। जो भारत में कुल स्थापित विद्युत क्षमता का लगभग 10 प्रतिशत है।
- वर्तमान में, भारत में 3.83 मिलियन बायोगैस के प्लांट कार्यरत है तथा सरकार द्वारा वर्श 2010 तक बायोगैस के 12.34 मिलियन और प्लांट लगाने का लक्ष्य रखा गया है।

**ग्लोबल वार्मिंग तथा बायोगैस तकनीक**

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में चलाये गए शोध (पाठक एवं जैन, 2009) से पता चलता हैः

- ऊर्जा और खाद प्रति अलावा, बायोगैस के उपयोग से भोजन पकाने के लिए लकड़ी, रोशनी हेतु मिट्टी के तेल तथा रासायनिक उर्वरक की आवश्यकता नही पडती। अतः इस प्रकार बायोगैस द्वारा हरित गृह गैस के उत्सर्जन को रोकने तथा ग्लोबल वार्मिंग को कम करने का उत्तम अवसर मिलता है।
- एक परिवार के लायक बायोगैस प्लांट निम्नलिखित का पूरक होता हैः

| | | |
|---|---|---|
| मिट्टी का तेल | : | 316 लीटर |
| जलावन | : | 5,535 कि.ग्रा. |
| गोबर | : | 4,400 कि.ग्रा. |

**बायोगैस तकनीक के प्रसार में आनेवाली समस्यायें**

तकनीक के प्रसार एव इसे अपनाने से जुड़े तकनीकी आर्थिक तथा सांस्कृतिक पहलू इस प्रकार है :

**तकनीक पहलू**

- बायोगैस का प्लान्ट पूरे वर्ष तकनीकी रूप से सही कार्य नहीं करता क्योंकि जाड़े में तापमान कम होने से इसमें मीथेन नही बन पाती।
- कभी–कभी गलत तरीके से निर्मित होने के कारण प्लान्ट ठीक से काम नहीं कर पाते।

**आर्थिक पहलू**

- बायोगैस तकनीक की प्रकृति किफायत है।
- बायोगैस के प्लान्ट को केवल खाना बनाने की गैस के स्रोत की अपेक्षा जन–समुदाय के उपयोग तथा उर्वरक प्राप्ति के लिए लगाना अधिक लाभदायक होता है।

**सांस्कृतिक गतिविधियाँ**

- बायोगैस उत्पदन में काम आनेवाली विविध वस्तुओं, खासकर शौच के उपयोग के कारण साधारणतः लोग इसे अपनाने से कतराते हैं।
- पारम्परिक पाक विधियों को बदलने की जरूरत पड़ सकती हैं।

**निष्कर्ष :** बायोगैस तकनीक, अवशिष्ट पदार्थ के किफायती ढ़ग से निपटारे का एक उत्तम जरिया है। भारत के परिप्रेक्ष्य में इस तकनीक का भविष्य अत्यंत उज्जवल है परन्तु इसके लिए सीमित संसाधनों के कुशल उपयोग के प्रति लोगों को जागरूक करना आवश्यक है। नीति–निर्धारकों द्वारा बायोगैस तकनीक द्वारा ग्लोबल वार्मिंग में कमी को बढ़ावा देना चाहिए ताकि कृषकों को जलवायु परिवर्तन का सामना करने तथा कार्बन राजस्व के समन्वय से मदद मिले। इससे कृषक बायोगैस को लाभदायक गतिविधि के रूप में विकसित कर सकेंगे।

# पॉली हाउस में उत्पादन को अनुकूलित करने की रणनीतियाँ

**राजेश कुमार शर्मा, राकेश कुमार यादव एवं अरविंद नागर**

यांत्रिक कृषि फार्म, कोटा, कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज, कोटा एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

उचित और आवश्यकता आधारित क्लैडिंग सामग्री (यूवी स्थिरीकृत) का उपयोग करके पॉली हाउस और संबंधित संरचनाओं की कुशल डिजाइनिंग और निर्माण ग्रीनहाउस प्रौद्योगिकी की सफलता के लिए पूर्व–आवश्यकता है। ग्रीनहाउस प्रौद्योगिकी की वास्तविक क्षमता का दोहन करने के लिए उस क्षेत्र की जलवायु परिस्थितियों के अनुसार डबल डोर, पर्याप्त साइड और टॉप वेंटिलेशन, ड्रिप सिंचाई, फॉगिंग सुविधा और 40–50 प्रतिशत शेड नेट वाले एक आदर्श पॉलीहाउस/ग्रीनहाउस का निर्माण किया जा सकता है। विभिन्न जैविक और अजैविक तनावों के प्रभाव को कम करने के लिए प्लास्टिक मल्च, पोर्टेबल सुरंगों, छाया घरों या पंक्ति कवर का उपयोग आर्थिक रूप से विभिन्न स्थितियों में किया जा सकता है। प्रौद्योगिकी की सफलता के लिए यांत्रिक और भौतिक बाधाओं, स्वच्छता और अन्य तरीकों से कीड़ों–मकोड़ों का बहिष्कार आवश्यक है। ऊंची पहाड़ियों और शुष्क समशीतोष्ण क्षेत्रों में पॉली हाउस बर्फ के भार, तेज ठंडी हवाओं और बेहद कम तापमान का प्रतिरोध करने के लिए पर्याप्त मजबूत होने चाहिए। इसलिए, भारत की विभिन्न कृषि–जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल आर्थिक और पारिस्थितिक रूप से टिकाऊ संरक्षित संरचनाओं को स्वदेशी रूप से विकसित करने की आवश्यकता है।

कई नई फसलें शुरू की जा सकती हैं, लेकिन उनके संरक्षित खेती की जैविक संरचना को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करने की संभावना मध्यम दिखाई देती है। भारत में, ग्रीनहाउस में निरंतर और गहन खेती के कारण निमेटोड और मिट्टी जनित बीमारियों की समस्या को कम करने के लिए सोलेनेसियस और कुकुर्बिटेशियस सब्जियों की ग्राफ्टिंग का बड़े पैमाने पर अभ्यास किया जा रहा है। हाइड्रोपोनिक्स, एरोपोनिक्स और पोषक तत्व फिल्म तकनीकों की आधुनिक तकनीकें केवल ग्रीनहाउस स्थितियों में ही संभव हैं और ये जल और पर्यावरण प्रदूषण को कम करती हैं। सिंचाई और उर्वरक आवश्यकताओं (फर्टिगेशन) के अधिक सही और विवेकपूर्ण परिमाणीकरण के लिए उन्नत उपकरणों और नवीन पद्धतियों का उपयोग महत्वपूर्ण आदानों जैसे पानी और उर्वरक के विवेकपूर्ण उपयोग को सुनिश्चित करने के अलावा ग्रीनहाउस खेती की उत्पादन लागत को काफी कम कर सकता है।

## पॉली हाउस में उत्पादन को अनुकूलित करने के मुख्य बिंदु

उच्च मूल्य वाली फसलों की संरक्षित खेती आर्थिक और पर्यावरण दोनों ही दृष्टि से महत्वपूर्ण है। उच्च मूल्य वाली सब्जियों की संरक्षित खेती के लिए अनिवार्य रूप से प्रशिक्षण, कौशल विकास, स्वच्छ स्थिति और उचित पूर्व योजना की आवश्यकता होती है। इसलिए, पॉलीहाउस उत्पादकों को पर्यावरण अनुकूल और अच्छी कृषि पद्धतियों का पालन करके संरक्षित खेती की युक्तियों और तकनीकों से अच्छी तरह वाकिफ होना चाहिए ताकि उच्च उपज, बेहतर गुणवत्ता, उत्पाद सुरक्षा और आकर्षक रिटर्न सुनिश्चित किया जा सके। तकनीकी हस्तक्षेप से सब्जी उत्पादकता में सुधार हो सकता है और उपलब्धता बढ़ सकती है। ये इस प्रकार हैं

### संरचना निर्माण के समय

उस क्षेत्र का सर्वेक्षण करके पहले से ही मांग वाली फसलों और बाजारों की पहचान करें। विशेष रूप से सर्दियों में सूर्य की रोशनी को अधिकतम करने के लिए जगह का चयन करें। दक्षिण या दक्षिण–पूर्व में अच्छा प्रदर्शन सर्वोत्तम है। पॉलीहाउस का निर्माण हवा की दिशा के अनुरूप धूप और अच्छे जल निकास वाले स्थान पर करें। पॉलीहाउस में बिजली और पानी की आपूर्ति सुनिश्चित करें। बिजली कटौती या गंभीर मौसम की स्थिति के मामले में एक बैकअप योजना तैयार करें। बुनियादी आवश्यक सुविधाओं और रखरखाव अनुबंध के साथ विश्वसनीय कंपनी से एक आदर्श पॉलीहाउस का निर्माण करें, और पॉलीहाउस स्थापित करने से पहले मिट्टी के स्वास्थ्य की स्थिति (पोषक तत्व, मिट्टी के सूक्ष्मजीव, निमेटोड) निर्धारित कर लें।

### ग्रीन हाउस का डिजाइन निम्नलिखित पहलुओं पर निर्भर करता है –

1) समग्र संरचनात्मक डिजाइन और व्यक्तिगत संरचनात्मक घटकों के गुण।
2) विशिष्ट यांत्रिक और भौतिक गुण जो आवरण सामग्री के संरचनात्मक व्यवहार को निर्धारित करते हैं।
3) ग्रीनहाउस में उगाई जाने वाली फसल की प्रकाश और तापमान के प्रति विशिष्ट संवेदनशीलता।
4) आवरण सामग्री के भौतिक गुणों से संबंधित विशिष्ट आवश्यकताएं।
5) फसल की कृषि संबंधी आवश्यकताएँ।

### रोपण से पहले

हर वर्ष मिट्टी का स्थूल, सूक्ष्म पोषक तत्व, पीएच और कार्बनिक कार्बन के लिए परीक्षण कराएं और मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरक का प्रयोग करें। फसल की सफलता के लिए रोपण का समय सबसे महत्वपूर्ण है और पॉलीहाउस उत्पादकों को अनुशंसित प्रथाओं के पैकेज का पालन करना चाहिए। लंबी उगने वाली उच्च मूल्य वाली सब्जियां ऊर्ध्वाधर स्थान का कुशलतापूर्वक उपयोग करके सब्जियां उगाने की क्षमता प्रदान करती हैं। शिमला मिर्च, टमाटर और पार्थेनोकार्पिक ककड़ी। ऑफ–सीजन के दौरान और बाजार की मांग के अनुसार उत्पादन योजना बनाई जानी चाहिए। दो दरवाजों के बीच की जगह को स्टोर के रूप में या प्लग ट्रे या प्रो–ट्रे में पौधे उगाने के लिए उपयोग न करें। केवल संकर किस्में ही उगाएं और विश्वसनीय स्रोत से गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री खरीदें। स्थान एवं मौसम के अनुसार उपयुक्त फसल किस्म (संकर) का चयन करें। विशेष रूप से बैक्टीरियल विल्ट और पाउडरयुक्त फफूंदी के विरु) रोग प्रतिरोधी सहिष्णु संकर उगाएं। कीट मुक्त संरचनाओं के तहत फसल उगाने के लिए प्लग प्रो–ट्रे में उगाए गए पौधों को प्राथमिकता दें। कीट–पतंगों और बीमारियों की रोकथाम के लिए रिले क्रॉपिंग और क्रमब) रोपण से बचें।

### रोपण के समय

विशेषकर लंबी सब्जियों की फसल के लिए 50–60 सेमी की दूरी पर ऊंची क्यारियां (8–90 सेमी चौड़ी और कम से कम 20 सेमी ऊंची) बनाएं। ऊंचे बिस्तरों में वर्मीकम्पोस्ट (1 किग्रा प्रति वर्ग मीटर) या अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद (2किग्रा प्रति वर्ग मीटर) का उपयोग करें। रोपाई से एक सप्ताह पहले उड़ने वाले कीड़ों को बड़े पैमाने पर फंसाने के लिए प्रति 10 वर्ग मीटर में 1 जाल की दर से उचित संख्या में पीले/नीले चिपचिपे जाल स्थापित करें। पौधों की रोपाई जोड़ी पंक्ति पैटर्न में पौधे से पौधे और पंक्ति से पंक्ति के साथ बिस्तर के केंद्र से 45–60 ग 30 सेमी की दूरी पर या जिगजैग रोपाई के साथ की जा सकती है यानी त्रिकोण आकार में (मतलब दूसरी पंक्ति के पौधों को केंद्र में और समानांतर रखा जाना चाहिए। पहली पंक्ति के पौधे। प्रति वर्ग मीटर 10–12 ग्राम जटिल उर्वरक (2 ग्राम प्रति पौधें लगाएं। रोपाई के एक दिन बाद मिट्टी में भिगोने के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल/0.05 मिली प्रति पौधा लगाएं। इसके लिए 5 मिलीलीटर इमिडाक्लोप्रिड 17. 8 एसएल को 10 लीटर पानी में मिलाएं और प्रति रोपण गड्ढे में 100 मिलीलीटर घोल का उपयोग करें। पॉली हाउस के प्रवेश स्तर पर जूता कीटाणुनाशक का प्रयोग करें। पॉली/नेट–हाउस के तहत उगाई जाने वाली विभिन्न सब्जी फसलों की सांस्कृतिक पद्धतियाँ तालिका 1 में दी गई हैं।

**पौधे की वृद्धि अवधि के दौरान**

उच्च उपज और गुणवत्ता वाली उपज, विशेष रूप से उच्च मूल्य वाली ग्रीष्मकालीन सब्जियां उगाने के लिए फसल अवधि के दौरान औसत तापमान (20–25 डिग्री सेल्सियस) और सापेक्ष आर्द्रता (60–80 प्रतिशत) को नियंत्रित करें। उच्च मूल्य वाली फसलें उगाते समय तापमान और आर्द्रता पर कड़ी निगरानी रखें। शीतकालीन फसलों के लिए, औसत तापमान (15–20 डिग्री सेल्सियस ) और सापेक्ष आर्द्रता (60–80 प्रतिशत) बनाए रखें। उच्च मूल्य वाली ग्रीष्मकालीन सब्जियों के मामले में, 50 प्रतिशत यूवी स्थिर शेड नेट, लगातार फॉगिंग और बढ़े हुए वेंटिलेशन का उपयोग करके तापमान को 35 डिग्री सेल्सियस से अधिक बढ़ने से रोकें। पॉली हाउस के अंदर तापमान और आर्द्रता को नियंत्रित करने के लिए फॉगर्स को लगभग पौने एक मिनट तक ही चलाना चाहिए। पॉली हाउसों को गर्मी, बरसात और सर्दी के मौसम में आवश्यकतानुसार हवादार बनाएं। सर्दियों के दौरान, साइड वेंट के खुलने और अवधि को मौजूदा तापमान और साइट के स्थान के अनुसार समायोजित किया जा सकता है।

**सिंचाई एवं उर्वरता शेड्यूलिंग**

सब्जियों की संरक्षित खेती के लिए ड्रिप सिंचाई की सिफारिश की जाती है ताकि पानी की कमी को कम किया जा सके, फलों की गुणवत्ता में सुधार किया जा सके और पौधे के जड़ क्षेत्र में पौधों के पोषक तत्वों की आपूर्ति करके इनपुट उपयोग, विशेष रूप से उर्वरकों के उपयोग में सुधार किया जा सके। अक्टूबर के दौरान ड्रिप के माध्यम से 2–3 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करेंय नवंबर–फरवरी के दौरान 4 से 5 दिनों का अंतरालय मार्च में 2 से 3 दिन का अंतरालय और अप्रैल–मई के दौरान 1 से 2 दिन के अंतराल पर। रोपाई के 21 दिन बाद फर्टिगेशन शुरू करें और अंतिम कटाई से 15 दिन पहले रोक दें। फसल की वृद्धि के आधार पर तरल उर्वरक 19:19:19 या 18:18:18/2–2.5 ग्राम प्रति वर्ग मीटर एक या दो बार लगाएं।

**पादप विकास नियामकों (पीजीआर) की प्रतिक्रिया**

बेहतर गुणवत्ता वाले फलों के साथ उच्च फसल उपज पैदा करने के लिए पादप विकास नियामकों का बहिर्जात अनुप्रयोग प्रभावी पाया गया है। यद्यपि पीजीआर में पौधों की वृद्धि और आकारिकी को प्रभावित करने की काफी संभावनाएं हैं, लेकिन इसके अनुप्रयोग और वास्तविक मूल्यांकन आदि को इष्टतम सांद्रता, आवेदन के चरण, प्रजातियों की विशिष्टता, मौसम आदि के संदर्भ में विवेकपूर्ण ढंग से नियोजित किया जाना चाहिए, जो पीजीआरएस प्रयोज्यता में प्रमुख बाधाएं हैं। पौधों की वृद्धि और उपज के हर पहलू पर उनकी व्यापक स्पेक्ट्रम प्रभावशीलता को ध्यान में रखते हुए।

**सूक्ष्म पोषक तत्वों पर प्रतिक्रिया**

अधिक उपज और गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए खनिज पोषक तत्वों का प्रयोग आवश्यक है क्योंकि भारतीय मिट्टी में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी है।

पॉलीहाउस में क्यारियों की तैयारी और पौधों का प्रत्यारोपण

पौधों की बेहतर वृद्धि और विकास के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है लेकिन कम मात्रा में, हालांकि उनकी कमी से शारीरिक और चयापचय प्रक्रियाओं में अधिक गड़बड़ी होती है और अंततः उपज और गुणवत्ता कम हो जाती है। कृषि फसलों के उच्च उत्पादन के लिए टिकाऊ कृषि–इनपुट प्रदान करने के लिए नए उर्वरकों और कीटनाशकों के विकास में नवाचार की आवश्यकता है। कृषि में नैनोकणों की महत्वाकांक्षा फैलते रसायनों की मात्रा को कम करना, उर्वरक में पोषक तत्वों की हानि को कम करना और कीट और पोषक तत्व प्रबंधन के माध्यम से उपज में वृद्धि करना है।

**छंटाई, प्रशिक्षण और अन्य सांस्कृतिक संचालन**

उगाने की पारंपरिक प्रणाली में पौधों को मिट्टी में उगने दिया जाता है, इसलिए फलों में रोग लगने की संभावना अधिक होती है और जमीन पर फलों के सड़ने की संभावना अधिक होती है क्योंकि फल पकने तक मिट्टी और पानी के संपर्क में रहते हैं। इसलिए, टमाटर, मिर्च, शिमला मिर्च और बैंगन जैसी विभिन्न सब्जी फसलों में समय पर और आवश्यकता आधारित छंटाई और प्रशिक्षण का पालन करें। प्राकृतिक रूप से हवादार पॉलीहाउस में शिमला मिर्च में चार तने (एक फूल और दो पत्तियां) टमाटर में दो तने (सहायक शाखाओं को हटाकर) और पार्थेनोकार्पिक खीरे में एक तने (सहायक शाखाओं को हटाकर) पर प्रशिक्षण उच्च उपज सुनिश्चित करता है। एकसमान उत्पादन और बेहतर गुणवत्ता वाला उत्पाद। शाखाओं और पत्तियों का यह प्रशिक्षण और छंटाई अधिकतम वायु परिसंचरण की अनुमति देता है और कीट नियंत्रण समस्याओं को कम करता है।

**पौध संरक्षण उपाय**

चिपचिपे जालों को फसल की ऊंचाई के अनुसार समायोजित करें और जालों को पौधे की छतरी से 5–10 सेमी ऊपर रखें। पाउडर रूपी फफूंद की घटनाओं को कम करने के लिए एकी—त कीट प्रबंधन का पालन करें और निवारक और आवश्यकता आधारित पर्यावरण–अनुकूल पौधों की सुरक्षा के उपाय करें। कीट–पतंगों और बीमारियों के प्रकोप को कम करने के लिए नीम आधारित वानस्पतिक कीटनाशकों का 10 से 12 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए। सभी कीटनाशकों का प्रयोग शाम के समय करना चाहिए। रोगग्रस्त पौधों को समय पर खेत से उखाड़कर नष्ट कर दें।

**कटाई**

बाजार की मांग और उपभोक्ता की पसंद के आधार पर कटाई उचित समय पर, विशेषकर शाम के समय की जा सकती है। बाजार में अधिक कीमत दिलाने के लिए फलों की ग्रेडिंग महत्वपूर्ण है। फलों को आकार, आकार और परिपक्वता में एकरूपता के लिए वर्गीकृत किया जाता है और कम आकार, अधिक आकार, रोगग्रस्त और कीट से क्षतिग्रस्त फलों को तोड़ दिया जाता है। ग्रेडिंग और उचित पैकेजिंग के बाद ही उपज को बाजार में भेजें।

**मृदा स्वास्थ्य और संरचना का रखरखाव**

जब नर्सरी या फसल को भूमि के एक ही टुकड़े पर बार–बार उगाया जाता है, तो मिट्टी जनित रोगजनकों से मिट्टी बीमार हो जाती है। मृदा जनित रोगजनकों की जांच के लिए मृदा बंध्याकरण की सिफारिश की जाती है। मृदा जनित रोगजनकों और नेमाटोड से निपटने के लिए मई–जून के दौरान निचली पहाड़ियों और मैदानी इलाकों में 50–60 दिनों के लिए 30–50 माइक्रोन मोटाई की पारदर्शी पॉलिथीन शीट से मिट्टी को ढ़ककर मृदा सौरीकरण का अभ्यास करें। सूखी मिट्टी की तुलना में गीली मिट्टी का सौर्यीकरण अधिक प्रभावी होता है। वैकल्पिक रूप से, रासायनिक बंध्याकरण के माध्यम से मिट्टी को रोगाणुरहित किया जा सकता है। इसके लिए 2.0 प्रतिशत फॉर्मेलिन घोल (एक लीटर पानी में

20 मिली फॉर्मेलिन) डालें और मिट्टी को 4.0 –5.0 लीटर प्रति वर्ग मीटर की दर से घोलें। आवेदन के बाद, मिट्टी को 48–72 घंटे के लिए पॉलीथीन शीट से ढक दें। पॉलिथीन शीट को हटाने के बाद मिट्टी को 3–4 दिनों तक हिलाएं, ताकि मिट्टी से रासायनिक धुंआ खत्म हो जाए। हरित गृहों की यूवी स्टेबलाइज्ड शीट और नेट पर जमा धूल के कणों की प्रेशर क्लीनिंग का प्रयोग हर साल किया जाना चाहिए। पॉली हाउस और नेट हाउस की टूट–फूट के लिए नियमित रूप से निरीक्षण करें। पॉलीध्नेट हाउस में डबल डोर सिस्टम का प्रयोग करें। घर में प्रवेश करते समय हमेशा दरवाजा ठीक से बंद कर लें। पॉली हाउस और नेट हाउस के दरवाजों और दीवारों के सभी छेदों को बंद कर दें। कीटों के प्रवेश को रोकने के लिए पॉलीथीन/जाल को मिट्टी में ठीक से लगा दें।

**तालिका 1: पॉली हाउस में उगाई जाने वाली सब्जियों की कृषि संबंधी प्रक्रिया**

| क्र. सं. | कृषि संबंधित प्रक्रिया | खीरा | टमाटर | शिमला मिर्च | बैंगन |
|---|---|---|---|---|---|
| 1. | बुआई का समय | अगस्त के अंत से सितम्बर के प्रथम सप्ताह तक, जनवरी का पहला पखवाड़ा | मध्य सितम्बर | अंत सितम्बर | वर्षा ऋतुः मध्य जून, पतझड़ का मौसमः मध्य सितंबर, वसंत का मौसमः नवंबर के अंत में |
| 2. | रोपाई का समय | बुआई के 7–8 दिन बाद | मध्य अक्टूबर | अंत अक्टूबर | बुवाई के एक महीने बाद |
| 3. | बीज दर प्रति एकड़ | 12000–14000 पौधे | 40 ग्राम | 120 ग्राम | 160 ग्राम |
| 4. | अंतराल | 90.30 सेमी | 90.30 सेमी | 90.30 सेमी | 90.30 सेमी |
| 5. | उपज / पौधा (किग्रा.) | 2.5 से 4 | 7 से 12 | 2.5 से 4 | 3 से 4 |

**तालिका 2 : विभिन्न सब्जी फसलों में फर्टिगेशन शेड्यूल**

| फसल | फसल अवस्था रोपाई के बाद दिनों की संख्या | एन.पी.के. | खुराक (ग्राम प्रति 1000 वर्ग मीटर) |
|---|---|---|---|
| खीरा | 0–14 दिन | 19:19:19 | 600 |
| | 14–35 दिन | 13:00:45<br>46:00:00 | 400<br>200 |
| | 35 दिन से फसल खत्म होने तक | 13:00:45<br>46:00:00 | 600<br>300 |
| टमाटर | रोपण से प्रथम फूल आने तक | 19:19:19 | 500 |
| | पहले फूल से लेकर पहले फल लगने तक | 19:19:19<br>46:00:00<br>00:00:50 | 300<br>350<br>550 |
| | पहला फल सेट से सभी तुड़ाई के लिए | 19:19:19<br>46:00:00<br>00:00:50 | 300<br>500<br>550 |
| | फसल खत्म होने तक | 19:19:19<br>46:00:00<br>00:00:50 | 100<br>250<br>300 |
| शिमला मिर्च | रोपण से लेकर पहले ट्रस की स्थापना तक | 19:19:19<br>00:00:50 | 600<br>50 |
| | पहली ट्रस से पहली तुड़ाई तक | 19:19:19<br>46:00:00<br>00:00:50 | 1000<br>250<br>500 |
| | पहली तुड़ाई के बाद फसल के अंत तक | 19:19:19<br>46:00:00<br>00:00:50 | 1200<br>500<br>500 |

# प्राकृतिक खेती किसानों के लिये वरदान

**देवी लाल किकरालियाँ, अनुज कुमार, उमा नाथ शुक्ल एवं विजय लक्ष्मी यादव**

स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर एवं श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

पेड़–पौधों की वृद्धि और उनसे अच्छा उत्पादन लेने के लिए जिन–जिन संसाधनों की आवश्यकता होती है. उन सभी संसाधनों को पौधों को उपलब्ध कराने के लिए प्रकृति को बाध्य करना प्राकृतिक कृषि कहलाती है। प्राकृतिक खेती को रासायन मुक्त खेती के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें केवल प्राकृतिक आदानों का ही उपयोग किया जाता है। प्राकृतिक खेती जापान के किसान एवं दार्शनिक मासानोबू फुकुओका द्वारा स्थापित कृषि की पर्यावरणरक्षी पद्धति है। फुकुओका ने प्राकृतिक खेती को निम्नलिखित पाँच सूत्रों में बाँध दिया है–

- जुताई नहीं
- उर्वरक नहीं
- कीटनाशक नहीं
- निराई नहीं
- छंटाई नहीं

**जीरो बजट प्राकृतिक कृषि क्या है ?**

यह देसी गाय के गोबर एवं मूत्र पर आधारित खेती है इस प्रकार से एक देसी गाय के गोबर एवं मूत्र से तीस एकड़ जोत पर जीरो बजट खेती संभव है। देसी गाय के गोबर–मूत्र से जीवामृत, घनजीवामृत एवं जामन बीजामृत बनता है। इन सभी के इस्तेमाल से खेत की मिट्टी में पोषक तत्व में बढ़ोत्तरी के साथ अन्य जैविक गतिविधियों का फैलाव हो जाता है। महीने में एक या दो बार जीवामृत को छिड़क सकते है जबकि बीजामृत का प्रयोग बीजो पर किया जाता है। इस तरह से ज़ीरो बजट खेती करने वाले किसान को मार्केट में जाकर किसी अन्य उर्वरक केमिकल अथवा कीटनाशक को खरीदने की आवश्यकता नहीं रहती है।

**देश में जीरो बजट खेती का आरम्भ :** जीरो बजट खेती का उद्भव मुख्य रूप से महाराष्ट्र के एक कृषक 'सुभाष पालेकर' की विकसित रसायन मुक्त खेती से हुआ है। जीरो बजट प्राकृतिक खेती की विधि परंपरागत कृषि से सम्बंधित है। इस खेती में उर्वरक, कीटनाशक, गहन सिचांई की जरुरत नहीं रहती है। इस प्रकार से इस विधि से आप किसी भी फसल की खेती करें उसका लागत मूल्य शून्य ही आता है। इस खेती में प्रयोग होने वाले सभी संसाधन किसान के घर पर ही प्राप्त हो जाते है। जैसे कि देसी गाय का गोबर एवं मूत्र का जीवामृत, घनजीवामृत से मिट्टी में पोषक तत्वों में बढ़ोत्तरी के साथ ही जैविक घटको का विस्तार होता है।

**प्राकृतिक खेती के चार घटक**

**जीवामृत :** इसमें किसी भी भारतीय गाय (देसी गाय) का गोबर–मूत्र, दूसरी घरेलु सामग्री जैसे गुड़, दाल आटा एवं साफ़–सजीव मिट्टी को मिलकर तैयार घोल का प्रयोग होता है। ये मिश्रण जमीन के सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या को बढ़ाता है। यह परंपरागत खेती से भिन्न होती है चूँकि इसमें गाय के गोबर–मूत्र को जैविक खाद्य की तरह नहीं यदिप एक जैव–जामक की भाँति इस्तेमाल करते है। ये जामक जोत के लाभप्रद सूक्ष्म जीवाणु और केंचुओं की संख्या और गतिविधियों को अच्छे स्तर तक बढ़ाता है। इस प्रकार से जमीन के पोषक तत्व फसल को आसानी से मिलते है। साथ ही फसल एवं पौधो को नुकसानदायक जीवाणुओं से सुरक्षा एवं जमीन में 'जैविक कार्बन' में वृद्धि होती है।

**बीजामृत :** इसमें देशी नस्ल की गाय के गोबर–मूत्र एवं बुझे चुने से बने घटक के इस्तेमाल से बीज और पौधों की जड़ों पर सूक्ष्म आधारित लेप लगाकर इनकी नवीन जड़ों को बीज अथवा जमीन से जन्मे रोगो से सुरक्षा मिलती है। 'बीजामृत' के इस्तेमाल से फसल के बीज के अंकुरण क्षमता में अभूतपूर्व बढ़ोत्तरी देखने को मिलती है।

**आच्छादन :** जमीन में मौजूद नमी की रक्षा के लिए इसके ऊपर की सतह को किसी दूसरी फसल अथवा फसल के अवशेष से ढँक देते है। इस प्रकार की विधि से 'ह्यूमस' में बढ़ोतरी, भूमि की ऊपर सतह का संरक्षण, भूमि में जल संग्रह क्षमता वृद्धि, सूक्ष्म जीवाणुओं एवं पौधों के लिए जरुरी पोषक तत्वों में वृद्धि और खरपतवार में रोकथाम होती है। इसके अंतर्गत तीन विधियों का इस्तेमाल होता है ।

**वापसा :** वापसा, जमीन में जीवामृत इस्तेमाल एवं आच्छादन का परिणाम होता है। जीवामृत के इस्तेमाल एवं आच्छादन करने से जमीन की संरचना में सुधार आता है अंत में इसके परिणामस्वरूप जमीन में उत्तम जल प्रबंधन की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। खेती ना तो बारिश–तूफान में गिरती है और ना ही सूखे से डगमगाती है।

**व्हापासा :** इस विधि के अंतर्गत खेती में नमी की वृद्धि की बढ़ोत्तरी के लिए प्रा तिक विधियों का इस्तेमाल होता है। इसके अंतर्गत पौधे को जरुरी पोषण मिट्टी में मौजूद नमी एवं हवा के अणुओं से मिलता है।

**जीरो बजट प्राकृतिक खेती के फायदे :** एक कृषक के लिए ज़ीरो बजट खेती तकनीक हर प्रकार से फायदेमंद रहती है। इन्ही में से कुछ लबदु निम्न प्रकार से है–

**कम लागत :** यह ज़ीरो बजट खेती का सर्वाधिक महत्वपूर्ण लाभ है कि इस खेती में किसान को खेती के लिए शून्य खर्च की लागत आती है। चूँकि इस प्रकार की खेती में कृषक अपने आसपास की चीजों से ही खेती की जरूरतों की पुर्ति कर लेता है। इस प्रकार से किसान को रसायन, खाद और दूसरी वस्तुओं के लिए हजारों रुपयों को नहीं खर्चना पड़ता है।

**मृदा संरक्षण :** इस खेती की तकनीक में केवल प्राकृतिक चीजों को ही प्रयोग में लाते है तो यह खेत की जमीन की मिटटी की गुणवत्ता में वृद्धि करती है।

**ज्यादा उत्पादन :** यह एक परंपरागत एवं कारगर खेती तकनीक होने के कारण इस प्रकार की खेती में कृषक को अधिक मात्रा में फसल उत्पाद मिलता है।

**अच्छी गुणवत्ता युक्त उत्पाद :** पिछले कुछ दशकों से कृषि क्षेत्र में कीटनाशकों और खतरनाक रासायनिक पदार्थों का इस्तेमाल ज्यादा मात्रा में होने लगा है। इस प्रकार की चीजों के प्रयोग से मनुष्य की सेहत पर बुरा प्रभाव देखने को मिल रहा है। इसके विपरीत प्राकृतिक खेती में इंसानों को सेहतमंद खाने का पदार्थ मिलता है।

**पर्यावरण संरक्षण :** आधुनिक विधि से खेती करने पर कीटनाशक एवं जहरीले रासायनिक तत्व मिटटी एवं पानी में मिलकर वातावरण को दूषित कर देते है। इससे जलीय जंतुओं को भी काफी नुकसान होता है। इस प्रकार से प्राकृतिक खेती को अपनाकर इस प्रकार की समस्या से छुटकारा पा सकते है।

**पशुधन में बढ़ोत्तरी :** जीरो बजट खेती में गोबर एवं मूत्र की जरुरत होती है अतः इन चीजों की जरुरत पूरी करने के लिए पशुओं की जरुरत होती है। इस प्रकार से इस कृषि पद्धति को अपनाने से पशुओं के संरक्षण एवं पालन–पोषण का महत्व बढ़ेगा।

# कृषि जोखिम निवारण

**नरेश कुमार, नलीनी रामावत, रुनक कूड़ी एवं रूपसिंह**
कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

भारत में कृषि मुख्य व्यवसाय है व वर्तमान समय में भी लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या की जीविका षि पर आधारित है। कृषि उत्पादन में पिछले 3–4 दशकों में काफी तेजी आई है। आजादी के बाद खाद्यान्न उत्पादन 5 करोड़ टन से 3157 करोड़ टन तक पहुँच चुका है। यह सब यांत्रिक, रासायनिक व जैविक आविष्कारों की देन है। परंतु इन आविष्कारों के कारण आज मानव को कृषि में कई प्रकार के जोखिमों व दुर्घटनाओं का सामना करना पड़ रहा है। ये दुर्घटनाएँ या जोखिम स्वयं ही नहीं हो जाते, इनमें मानव की अनभिज्ञता, लापरवाही और अज्ञानता भी शामिल होती है।

## जोखिम क्या है ?

यदि कोइे कार्य, कार्य स्थिति व तरीका, कार्य में प्रयुक्त हाने वाले उपकरण या मशीन, वातावरण, पेड़ – पौधे या जानवर मनुष्य को शारीरिक, मानसिक अथवा भौतिक नुकसान पहुँचायें तो उसे जोखिम कहगें।

## जोखिम के कारण

कृषि कार्यों में जोखिम किस प्रकार मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं यह जानना अत्यंत आवश्यक है ताकि समय रहते हम सुरक्षित कार्य शैली अपना कर अपने स्वास्थ्य को सुरक्षित रख सकें। कृषि कार्यो में जोखिम के निम्न कारण मुख्य हैं–

- स्वयं मानव
- मशीन या उपकरण जो उपयोग में लिया जाये
- वातावरण जहाँ कार्य करना हो, एवं सायनों का उपयोग।

## जोखिमों के प्रकार

**1. शारीरिक जोखिम :** कार्य करने की अनुचित या असमान्य मुद्रा अपनाने से कार्यकर्त्ता को कई प्रकार के शारीरिक जोखिम हो जाते हैं जैसे–कमर से झुककर रोपाई, निराई–गुड़ाई करना, फसल की कटाई इत्यादि। इस प्रकार की मुद्रा में कार्य करने पर गर्दन, पीठ, कमर, बाज, पाँव की मासंपेशियों में तनाव व खिचाव हाता है जो दर्द व थकान उत्पन्न करता है। यदि व्यक्ति कई वर्षों तक झुककर काम करता रहेगा तो उसे हमेशा के लिए कमर दर्द या रीढ हड्डी सबंधित समस्याओं का सामना करना पड सकता है। इसके अलावा कृषक महिलाएँ एवं पुरुषों को अक्सर भारी वजन उठाते हुए भी पाया गया है जिससे भी स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पडता है। अत्यधिक शारीरिक शक्ति व्यय हो जाने से शरीर में कमजोरी आ जाती है और ऐसे व्यक्ति को बीमारियाँ आसानी से घरे लेती है। गर्भवती महिलाओं में गर्भपात का भी खतरा रहता है।

### जोखिमों से बचाव हेतु उपाय

- झुककर काम करने की अपेक्षा बैठकर कार्य करना चाहिए।
- थोड़ी–थोड़ी देर में शारीरिक मुद्रा बदलते रहना चाहिए। शरीर के अंगों को उचित मुद्रा व स्थिति में रखने पर कार्यकर्ता को थकान कम होगी साथ ही शारीरिक शक्ति भी कम व्यय होगी।
- कार्य हमेशा लय में करना चाहिए यानी कि शरीर को एक ही लय में दोहराना, जैसे एक ही क्रिया लगातार करना।
- कार्य करते समय मजबूत व बड़ी मांसपेशियों का प्रयोग करना चाहिए जैसे– भार उठाते समय पैरों व हाथों की मांसपेशियों का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि वे मजबूत होती हैं।
- भार उठाते समय उसे शरीर के समीप रखना चाहिए। इससे शक्ति कम व्यय होगी व थकान भी कम होगी।
- व्यक्ति को अपने शारीरिक वजन व क्षमता के अनुसार ही भार उठाना चाहिए अन्यथा कई माँसपेशीय व हड्डियों से सम्बन्धित समस्याएँ हो सकती हैं। शोध द्वारा यह सिद्ध हो गया है कि व्यक्ति को अपने वजन का 30 प्रतिशत भार ही उठाना चाहिए।
- भारी कार्यों के दौरान व्यक्ति को बीच–बीच में थोड़ा विश्राम करना चाहिए। इससे मांसपेशियों को भी आराम मिलेगा व उनमें उत्पन्न दबाव व तनाव भी कम हो जायेगा। विश्राम बहुत लंबे अंतराल का नहीं होना चाहिए। कार्य के अंत में थोड़ी देर लेटकर आराम करना बहुत फायदेमंद साबित हो सकता है।
- इसके अलावा व्यक्ति को पौष्टिक आहार भी उचित मात्रा में लेना चाहिए। अपने भोजन में अनाज, दाल, सब्जियाँ, फल, दूध, दही इत्यादि नियमित रूप से सम्मिलित करने चाहिये। ये सब चीजें शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाकर व्यक्ति को कई रोगों से बचा सकती हैं व उसे स्वस्थ रखती हैं।

**2. यांत्रिक जोखिम :** कृषि कार्यों में जोखिमों का एक और कारण मशीनों पर लापरवाही से काम करना है। ज्यादातर दुर्घटनाएँ ट्रैक्टर, थ्रेशर, रीपर, पानी की मोटर, चॉफ कटर, स्प्रेयर आदि से होती हैं। इनसे चोट लगना, करंट लगना, अंगुलियों का कटना, हाथ या पैर का कटना, गिरना, फिसलना, मोच आना, हड्डी टूटने से लेकर मृत्यु भी संभव है। इसके अलावा ये मशीनें तेज आवाज उत्पन्न करती हैं जिससे कार्यकर्त्ता के कान के पर्दों पर भी प्रभाव पड़ता है और ध्यान नहीं रखने पर व्यक्ति आंशिक या पूर्ण रूप से बहरा हो सकता है। यदि थोड़ी सावधानी बरती जाए तो दुर्घटनाओं एवं बीमारियों से बचा जा सकता है।

### मशीनों पर कार्य के दौरान निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए –

- मशीन का उपयोग करने से पूर्व उसके बारे में पूरी जानकारी व चलाने का प्रशिक्षण ले लेना चाहिए। मशीन को चलाने से पहले उसके सभी पुर्जों की जाँच कर लेनी चाहिए व चालक को हेलमेट व जूते आदि पहन लेने चाहिये।
- ज्यादातर ट्रैक्टर दुर्घटनाएँ तेज गति से चलाने के कारण होती हैं। ट्रैक्टर के साथ उपयोग में लिये जा रहे उपकरण को ध्यान में रखकर गति निर्धारित करनी चाहिये। मोड़ते समय गति हमेशा कम रखें। ट्रैक्टर व्यस्कों के लिए बनाया गया है इसे बच्चों को न चलाने दें।
- यदि ट्रैक्टर, थ्रेसर या किसी भी मशीन को छोड़ना पड़े तो उसे चलता हुआ न छोड़े। इंजन बंद करके ब्रेक लगा दें व चाबियाँ निकाल लेनी चाहिये। चलती मशीन में तेल या पेट्रोल न डालें। अगर मशीन में अवरोध आ जाये तो मशीन बंद करके ही अवरोध हटायें। चलती हुई मशीनों पर नहीं चढ़ना चाहिये।
- बिजली से चलने वाली मशीनों को ठीक करते समय हाथ में रबर के दस्ताने व पैरों में जूते–चप्पल पहन कर रखें। इससे करंट लगने की संभावनाएँ बहुत कम हो जाती हैं।
- मशीनों की तेज आवाज से कानों को बचाने के लिये कपड़े या ईयर प्लग से अच्छी तरह ढ़क लें। इससे शोर का अहसास कम हो जाता है।
- फसल की गहाई करते समय नाक पर भी कपड़ा ढ़क लें अन्यथा भूसे के कण सांस के साथ फेफड़ों में जाकर कई व्याधियाँ उत्पन्न कर सकते हैं।
- मशीनों पर कार्य करते समय अपने कपड़ों व बालों का ध्यान रखें। ज्यादा ढ़ीले वस्त्र न पहने अन्यथा वे उड़कर मशीन के किसी भी हिस्से में फस सकते हैं और शरीर का कोई भी अंग चोटग्रस्त हो सकता है या कट सकता है। बालों को भी अच्छी तरह बांध कर रखना चाहिए।
- बच्चे व अन्य व्यक्ति जो कार्य में सहयोग नहीं कर रहे हों, को मशीनों से दूर रखें।

अतः जरूरी है कि व्यक्ति मशीनों पर कार्य के दौरान सतर्क रहे व संभावित जोखिमों की जानकारी स्वयं भी रखें व कार्यकर्ताओं को भी बताएँ। ऐसा करने पर वह स्वस्थ एवं सुरक्षित रह सकता है और दुर्घटनाओं व बीमारियों पर होने वाले खर्च से भी बचा सकता है।

यांत्रिक जोखिमों से बचने के लिये कृषक को कृषि कार्यों के लिए उन्नत तकनीक के उपकरण व औजारों का उपयोग करना चाहिये। इनसे श्रम साध्य कार्यों को आसान बनाया जा सकता है। इनके प्रयोग से व्यक्ति कई माँसपेशी संबंधी समस्याओं से छुटकारा पा सकता है और समय व श्रम दोनों की ही बचत कर सकता है।

फसल कटाई के लिए उन्नत दरांती का प्रयोग करना चाहिए। यह वजन में हल्की होती है व ब्लेड भी दांतेदार व लम्बी होती है। इससे कम समय में ज्यादा कटाई की जा सकती है। कम वजन के कारण काम करना आसान लगता है और हाथ की अंगुलियों में तनाव नहीं होता है।

कृषकों के लिए निराई–गुड़ाई व खरपतवार निकालने का कार्य कमरतोड़ मेहनत वाला होता है। इस कार्य को पारम्परिक तरीके से हाथ या कुदाली से घंटों झुककर किया जाता है। इस हेतु निराई–गुड़ाई का यंत्र वीडर एक वरदान है। यदि बुवाई कतार में की गई हो तो फसलों के बीच से खरपतवार निकालने के लिए पहियों वाली खुरपी–वीडर का प्रयोग किया जाना चाहिए। इसके प्रयोग से समय व श्रम कम लगेगा। झुकना नहीं पड़ेगा जिससे गर्दन, कंधे व कमर के दर्द से भी छुटकारा मिलेगा।

यदि मूंगफली के दानें निकालने हो तो मूंगफली छीलक (डिकोर्टिकेटर) का प्रयोग करना चाहिए। मूंगफली को हाथ से तोड़कर दाने निकालने से अंगुलियों में जख्म होने की संभावना रहती है, समय भी अधिक लगता है। इस मशीन से एक घंटे में 15–20 किलो मूंगफली के दाने बिना थकान के झट–पट निकाले जा सकते है।

अनाज व दालों की सफाई हेतु लटकाने वाली छलनी या पैडल से चलने वाली छलनी का उपयोग करने से कम श्रम व समय में अधिक कार्य किया जा सकता है। इसमें अलग–अलग छिद्रों वाली जालियां लगाई जा सकती हैं और कचरा व छोटे व टूटे हुए दानों को अलग किया जा सकता है। यही कार्य यदि हाथों से किया जाए तो कई दिन व घंटे लग जाते है।

इसके अलावा एक उपयोगी यंत्र है भिंड़ी या बैंगन तोड़ने की कैंची। यदि हाथ से भिंड़ी या बैंगन तोड़े जाए तो हाथ में खुजली व घाव हो जाते है। इस उपकरण की सहायता से भिंड़ी या बैंगन या अन्य कांटेदार सब्जियों को तोड़ने का कार्य हाथ की त्वचा को बिना नुकसान पहुंचाए किया जा सकता है।

**3. रसायनिक जोखिम :** कृषक फसल की अच्छी उपज के लिए उर्वरक, कीटनाशक दवाएं व अन्य रसायनों का भरपूर उपयोग करता है। इनके प्रयोग में सावधानी बरतनी चाहिए नहीं तो यह साँस द्वारा, चमड़ी द्वारा या खाने के साथ शरीर में पहुँच कर कई समस्याएं उत्पन्न कर देते हैं। कई रसायनों से हाथ व पैरों की चमड़ी में जलन होने लगती है, छाले या घाव हो जाते हैं। कुछ रसायन ऐसे भी होते है जिनमें से गैस निकलती है जो साँस के साथ शरीर के अंदर जा सकती है व आंख, नाक व मुँह में जलन पैदा कर सकती है। इससे जी घबराना, बेहोशी व अधिक होने पर दम घुटने से मौत भी हो सकती है।

**कृषि रसायनों के सुरक्षित उपयोग के लिये निम्न आवश्यक सावधानियाँ रखें–**

- डिब्बे पर लगे लेबल को ध्यान से पढकर विषैलेपन की जानकारी रखनी चाहिये।
- दवा सही एवं सिफारिश मात्रा में ही लेनी चाहिये जिससे वह व्यर्थ न जाये।
- हाथ में रबर के दस्ताने, पैरों में जूते, रबर का कोट, चश्मा व आवश्यक होने पर गैस मास्क पहन लेना चाहिए।
- घोल बनाने के लिये लकड़ी का प्रयोग करना चाहिये एवं घाव वाला शरीर का कोई भी हिस्सा रसायन के सम्पर्क में न लायें।
- स्प्रेयर की नोजल को मुँह से साफ करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये।
- खाने से पूर्व वस्त्र बदल कर हाथ, पैर, मुँह आदि साबुन से अच्छी तरह से धो लेने चाहिए।
- रसायन छिड़काव के समय पहने हुए कपड़ों को भी साबुन व पानी से अच्छी तरह धोने चाहिये।
- कृषि रसायन काम में लेते समय यदि जहर का प्रभाव शरीर पर हो तो तुरन्त डॉक्टर के पास जायें तथा रसायन का डिब्बा व पत्रक भी साथ ले जायें।
- खाली डिब्बों को नष्ट करके पानी के स्त्रोत से दूर जमीन में गाड़ दें। इनका उपयोग पानी व खाद्य पदार्थों को रखने के लिये नहीं करना चाहिये।
- रसायनों को बच्चों की पहुँच से दूर रखें।

कृषि रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से न केवल कृषक व उसके परिवार का स्वास्थ्य अपितु उसके पूरे समाज का स्वास्थ्य प्रभावित हो रहा है। साथ ही मिट्टी की प्रा तिक गुणवत्ता भी कम हो रही है। इसलिए वैज्ञानिक जैविक खाद जैसे–हरी खाद, गोबर से बनी हुई खाद, वर्मी खाद आदि के उपयोग एवं नीम से बनी हुई दवाओं के प्रयोग की सलाह दें। आप भी जैविक खाद का व दवाओं का अधिक से अधिक प्रयोग करें। स्वयं भी सुरक्षित रहे और दूसरों को भी स्वस्थ एवं सुरक्षित रखें।

**4. वातावरणीय जोखिम :** कृषक का कार्य वातावरण भी कई जोखिमों का कारण हो सकता है। वातावरण से तात्पर्य सिर्फ गर्मी, सर्दी या बरसात से ही नहीं है वरन् इन सभी चीजों से है जिनके सम्पर्क में कृषक प्रतिदिन आता है जैसे खेत की मिट्टी, आस–पास के पेड़–पौधे, कीट–पतंगे, साँप–बिच्छु इत्यादि।

अत्यधिक गर्मी में कार्य करने से व्यक्ति को कई जोखिमों का सामना करना पड़ता है जैसे लू लगना, उल्टी–दस्त, जी घबराना, चमड़ी झुलसना, चर्म रोग आदि। गर्मी में कार्य करें तो –

- जितना अधिक हो सके पानी पीये क्योंकि पसीने के कारण शरीर में पानी की कमी हो जाती है व व्यक्ति अस्वस्थ हो सकता है।
- लम्बे समय तक लगातार गर्म वातावरण में कार्य नहीं करना चाहिये। कार्य के बीच–बीच में, छाया में थोड़ा विश्राम करना चाहिये। सिर, गर्दन व बाहों को कपड़ों से झुलसेगी नहीं। गर्मी में हमेशा सूती वस्त्रों का ही प्रयोग करें क्योंकि ये आसानी से पसीना सोख लेते हैं।
- अधिक गर्म वातावरण हो तो कार्य का समय सुबह या शाम रखना चाहिए।

ऐसे ही सर्दी के मौसम में भी स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिए। अत्यधिक सर्दी में कार्य करने पर व्यक्ति को बुखार, जुकाम, अस्थमा आदि होने की संभावनाएँ रहती है। सर्दी से बचाव के लिए –

- उचित वस्त्र पहनकर ही खेतों पर जाएँ या कार्य करें।
- यदि पानी में कार्य करना है तो पाँव में जूते पहन लें इससे ठंड नहीं लगेगी। ठंडे मौसम में कार्य समय दिन को या धूप निकलने के बाद रखना चाहिए।

बरसात के मौसम में भी अपने सिर व शरीर को बचाना चाहिए। बरसात में जूते–चप्पल पहनकर ही खेतों में जाएँ अन्यथा जीव–जन्तु के काटने का डर रहता है। जब साँप–बिच्छु किसी व्यक्ति को काट खायें तो तुरन्त कटे हुए स्थान के ऊपर कपड़े की पट्टी कसकर बाँध दें व डॉक्टर को दिखाएँ। कई बार आस–पास उगने वाले जंगली पेड़–पौधों से भी व्यक्ति को एलर्जी हो जाती है। ऐसे पौधों को पहचान कर उखाड़ कर जला दें। अगर खेत के ऊपर से बिजली के तार जा रहे हों तो सावधानी रखें। खेत पर कुआँ हो तो उसकी मुण्डेर अवश्य बना दें नहीं तो किसी के गिरने का डर रहेगा। कार्य वातावरण का यदि ध्यान रखा जाए तो इससे होने वाले जोखिमों से बचाव हो सकता है। कार्य समय में बदलाव, कार्य के दौरान विश्राम, खेतों में जीव–जन्तुओं का ज्ञान व सावधानियाँ रखने से कृषक सुरक्षित व स्वस्थ रह सकता है।

# मृदा संरक्षण में आधुनिक नवाचार

**शालिनी मीणा, रामकिशन मीणा एवं उदिति धाकड़**
कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज, कोटा

कृषि उत्पादकता को बनाए रखने, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और हमारे पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए मृदा संरक्षण महत्वपूर्ण है। पारंपरिक तरीके, जो अभी भी मूल्यवान हैं, मृदा संरक्षण प्रयासों को बढ़ाने वाली नवीन तकनीकों द्वारा पूरक हो रहे हैं। इन नई तकनीकों में सटीक कृषि शामिल है, जो मिट्टी के स्वास्थ्य की निगरानी करने और संसाधन उपयोग को अनुकूलित करने के लिए GPS और सेंसर का उपयोग करती है, जिससे कटाव और क्षरण कम होता है। इसके अतिरिक्त, जैव प्रौद्योगिकी में प्रगति, जैसे कि सूखा प्रतिरोधी फसलों का विकास, प्रतिकूल परिस्थितियों में मिट्टी की संरचना और उर्वरता को बनाए रखने में मदद करता है। ड्रोन और सैटेलाइट इमेजरी द्वारा संवृधत लो–टिल फ़ार्मिंग और कवर क्रॉपिंग जैसी तकनीकें वास्तविक समय के डेटा प्रदान करती हैं जो किसानों को मिट्टी के अनुकूल उर्वरक प्रबंधन को प्रभावी ढंग से लागू करने में सक्षम बनाती हैं। मृदा मानचित्रण और डेटा विश्लेषण मिट्टी की संरचना और पोषक तत्वों की ज़रूरतों के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं, जिससे लक्षित हस्तक्षेप की सुविधा मिलती है। इसके अलावा, आधुनिक अनुप्रयोग विधियों द्वारा समृथत बायोचार और जैविक संशोधन, मिट्टी के कार्बन पृथक्करण और माइक्रोबियल गतिविधि में सुधार करते हैं, जिससे एक अधिक लचीला मिट्टी पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा मिलता है। चूंकि जलवायु परिवर्तन मिट्टी की स्थिरता के लिए बढ़ते खतरे पैदा करता है, इसलिए ये तकनीकें स्थायी भूमि प्रबंधन प्रथाओं को बढ़ावा देकर इसके प्रभाव को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इन अभिनव समाधानों के एकीकरण के माध्यम से, मृदा संरक्षण न केवल हमारे प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करता है, बल्कि स्थायी कृषि पद्धतियों का भी समर्थन करता है जो बदलते पर्यावरणीय परिदृश्य के अनुकूल हो सकते हैं। पारंपरिक प्रथाओं और अत्याधुनिक तकनीक के बीच यह तालमेल भविष्य की पीढ़ियों के लिए मिट्टी के स्वास्थ्य को संरक्षित करने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है। जिनमे से निम्न तकनीके शामिल है –

**1. परिशुद्ध खेती :** फसल प्रबंधन और उत्पादकता बढ़ाने के लिए उन्नत तकनीकों का लाभ उठाकर सटीक कृषि, कृषि उद्योग में क्रांति ला रही है। यह दृष्टिकोण किसानों को उनके खेतों के बारे में सटीक जानकारी प्रदान करने के लिए सेंसर, ड्रोन और डेटा एनालिटिक्स का उपयोग करता है, जिससे उन्हें रोपण, पानी, खाद और कटा   के बारे में उचित निर्णय लेने में सक्षम बनाया जाता है। संसाधनों को अधिक कुशलता से लागू करके, सटीक   षि अपशिष्ट को कम करती है, लागत कम करती है और पर्यावरणीय प्रभावों को कम करती है। उदाहरण के लिए, लक्षित लसचा और उर्वरक सुनिश्चित करते हैं कि फसलों को उनकी ज़रूरत के अनुसार सटीक पोषक तत्व मिलें, जिससे मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखते हुए उपज की गुणवत्ता और मात्रा में सुधार हो। इसके अलावा, वास्तविक समय की निगरानी कीटों और बीमारियों का जल्दी पता लगाने की अनुमति देती है, जिससे फसलों की रक्षा करने और रासायनिक उपचारों पर निर्भरता कम करने वाले त्वरित हस्तक्षेप संभव होते हैं। जैसे–जैसे जलवायु परिवर्तन और जनसंख्या वृद्धि टिकाऊ खेती के तरीकों की मांग को बढ़ाती है, सटीक कृषि खाद्य सुरक्षा और पर्यावरण संरक्षण को बढ़ाने के लिए एक व्यवहार्य समाधान प्रदान करती है।

**2. संरक्षित कृषि :** संरक्षित कृषि, न्यूनतम मृदा व्यवधान, स्थायी मृदा आवरण और विविध फसल चक्रों पर जोर देने के माध्यम से मृदा स्वास्थ्य और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। संरक्षित कृषि, जुताई को कम करके, मृदा संरचना को संरक्षित करती है, कटाव को कम करती है, और जल धारण क्षमता को बढ़ाती है, जो जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए, बिना जुताई वाली खेती के तरीके मृदा सतह पर फसल के अवशेष छोड़ देते हैं, जो कटाव के खिलाफ एक प्राकृतिक अवरोध के रूप में कार्य करते हैं और मृदा नमी के स्तर को बनाए रखने में मदद करते हैं। इसके अतिरिक्त, संरक्षित कृषि में अपनाई गई विविध फसल प्रणालियाँ मृदा उर्वरता में सुधार करती हैं, लसथेटिक उर्वरकों पर निर्भरता को कम करती हैं, और जैव विविधता को बढ़ावा देती हैं, जिससे लचीले कृषि पारिस्थितिकी तंत्र बनते हैं। ऐसी प्रथाएँ न केवल मृदा स्वास्थ्य की रक्षा करती हैं, बल्कि मृदा में कार्बन को अलग करके ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने में भी योगदान देती हैं। चूंकि वैश्विक कृषि खाद्य उत्पादन को स्थायी रूप से बढ़ाने के लिए बढ़ते दबाव का सामना कर रही है, इसलिए संरक्षण कृषि दीर्घकालिक मृदा उत्पादकता और पर्यावरण संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण के रूप में उभर रही है।

**3. कवर क्रॉपिंग :** कवर फसलें मिट्टी के कटाव को रोककर, मिट्टी की संरचना में सुधार करके, कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाकर और जैव विविधता को बढ़ावा देकर मिट्टी के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उदाहरण के लिए, ऑफ–सीजन के दौरान क्लोवर (ट्राइफोलियम) या वेच (विसिया सेटाइवा ) जैसी फलियों को लगाने से मिट्टी का कटाव काफी हद तक कम हो सकता है, क्योंकि इससे मिट्टी को हवा और जल अपरदन से बचाने वाला ग्राउंड कवर मिलता है। उनकी गहरी जड़ प्रणाली संकुचित मिट्टी की परतों को तोड़ने में मदद करती है, जिससे पानी का रिसाव और प्रतिधारण बेहतर होता है। इसके अलावा, जैसे–जैसे ये पौधे सड़ते हैं, वे मिट्टी में मूल्यवान कार्बनिक पदार्थ जोड़ते हैं, जिससे इसकी उर्वरता और सूक्ष्मजीव गतिविधि बढ़ती है। कवर फसलों का उपयोग प्राकृतिक रूप से खरपतवारों और कीटों को दबाकर रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों की आवश्यकता को भी कम करता है। मध्यपश्चिमी संयुक्त राज्य अमेरिका में, कई किसानों ने मकई या सोयाबीन की कटाई के बाद अपने खेतों की रक्षा के लिए सूदयों की राई को कवर फसल के रूप में लगाने की प्रथा को अपनाया है। यह न केवल मिट्टी को संरक्षित करता है बल्कि बाद के रोपण मौसमों में फसल की पैदावार में भी सुधार करता है, जो टिकाऊ कृषि में कवर फसलों के बहुमुखी लाभों को प्रदर्शित करता है।

**4. कृषि वानिकी :** कृषि वानिकी, कृषि परिदृश्य में पेड़ों और झाड़ियों का एकीकरण, मृदा संरक्षण और पर्यावरणीय स्थिरता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। फसलों के साथ नाइट्रोजन–फिलक्सग बबूल या फल देने वाले पेड़ों जैसी प्रजातियों को शामिल करके, किसान मिट्टी के कटाव को कम कर सकते हैं, मिट्टी की उर्वरता बढ़ा सकते हैं और जल प्रतिधारण में सुधार कर सकते हैं। इन पेड़ों की जड़ें मिट्टी को स्थिर करती हैं और अपवाह को कम करती हैं, पोषक तत्वों की हानि को रोकती हैं और मिट्टी की संरचना को बनाए रखती हैं। इसके अतिरिक्त, पेड़ों की उपस्थिति वन्यजीवों के लिए आवास बनाती है, जैव विविधता को बढ़ाती है और छाया प्रदान करती है, जिससे फसलों के लिए तापमान चरम सीमा कम हो जाती है। पूर्व अफ्रीका जैसे क्षेत्रों में, ग्रेविलिया रोबस्टा (रेशम आक) और विभिन्न फलीदार पेड़ों के साथ कृषि वानिकी अभ्यास मिट्टी के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने और फसल की पैदावार बढ़ाने में सफल रहे हैं। यह संधारणीय दृष्टिकोण न केवल कृषि उत्पादकता को बढ़ाता है बल्कि कार्बन को भी अलग करता है।

**5. बायोचार अनुप्रयोग :** बायोचार, कार्बनिक अपशिष्ट से पायरोलिसिस के माध्यम से उत्पादित चारकोल का एक रूप है, जो मृदा संरक्षण और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए एक उचित उपचार है। मिट्टी में मिलाए जाने पर, बायोचार मिट्टी की संरचना, जल प्रतिधारण क्षमता को बेहतर बनाता है, और पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाता है, जिससे पौधों की वृद्धि में सुधार होता है तथा मृदा कटाव भी कम होता है। इसकी छिद्रपूर्ण प्रकृति लाभकारी मिट्टी के सूक्ष्मजीवों के लिए एक आवास प्रदान करती है, जिससे मिट्टी की उर्वरता और स्वास्थ्य में वृद्धि होती है। इसके अलावा, बायोचार कार्बन (कार्बन सिक्वेसंट्रेशन) को अलग करता है, जो जलवायु परिवर्तन को कम करने में एक महत्वपूर्ण उपाय है। उदाहरण के लिए, अमेज़ॅन बेसिन जैसे क्षेत्रों में, मिट्टी में बायोचार को शामिल करना (टेरा प्रेटा के रूप में जाना जाता है ) सदियों से प्रचलित है, जिसके परिणामस्वरूप अत्यधिक उपजाऊ और उत्पादक भूमि होती है। इस प्राचीन तकनीक को अब विश्व स्तर पर पुनर्जीवित किया जा रहा है, यह दर्शाता है कि कैसे बायोचार पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करते हुए मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार कर सकता है।

**6. मृदा उपचार प्रौद्योगिकियाँ :** मृदा उपचार से तात्पर्य दूषित या खराब हो चुकी मिट्टी को स्वस्थ और उपयोगी अवस्था में वापस लाने की प्रक्रिया से है। इसमें मिट्टी में मौजूद प्रदूषकों को हटाने, बेअसर करने या कम करने के उद्देश्य से विभिन्न तकनीकें और विधियाँ शामिल हैं, जिससे इसे कृषि, आवासीय या औद्योगिक उद्देश्यों के लिए सुरक्षित बनाया जा सके। मृदा उपचार में दूषित पदार्थों को हटाने और मृदा स्वास्थ्य को बहाल करने के लिए कई विधियाँ शामिल हैं, जिनमें से प्रत्येक विशिष्ट प्रकार के प्रदूषण के लिए उपयुक्त है। फाइटोरेमेडिएशन में सूरजमुखी या विलो जैसे पौधों का उपयोग मिट्टी से भारी धातुओं और विषाक्त पदार्थों को अवशोषित करने के लिए किया जाता है, और इस तरह मिट्टी को साफ करते समय मिट्टी में प्रभावी रूप से कार्बनिक पदार्थ भी मिलाया जाता है। बायोरेमेडिएशन कार्बनिक प्रदूषकों को नष्ट करने के लिए सूक्ष्मजीवों का उपयोग करता है, जैसा कि तेल रिसाव को साफ करने के लिए बैक्टीरिया के उपयोग में देखा जाता है। मिट्टी की धुला में पानी या रासायनिक विलायकों का उपयोग करके मिट्टी के कणों से दूषित पदार्थों को शारीरिक रूप से अलग करना शामिल है, जो भारी धातुओं वाली मिट्टी को ठीक करने का एक प्रभावी तरीका है। थर्मल डिसोर्प्शन दूषित मिट्टी को गर्म करके प्रदूषकों को वाष्पी त करता है, जिसका उपयोग आमतौर पर वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों के लिए किया जाता है। इलेक्ट्रोकाइनेटिक रीमेडिएशन में भारी धातुओं और बारीक दाने वाली मिट्टी में कार्बनिक प्रदूषकों के लिए उपयोगी निष्कर्षण हेतु इलेक्ट्रोड की ओर प्रदूषकों को गतिशील करने के लिए विद्युत धारा का उपयोग किया जाता है। इसका एक उदाहरण चेरनोबिल में फाइटोरीमेडिएशन का उपयोग है, जहाँ रेडियोधर्मी संदूषण को कम करने के लिए सूरजमुखी लगाए गए थे। प्रत्येक विधि अद्वितीय लाभ प्रदान करती है, जिससे मृदा उपचार पर्यावरणीय चुनौतियों की एक विस्तृत श्रृंखला के लिए अनुकूल हो जाता है।

**निष्कर्ष :** खाद्य सुरक्षा, पर्यावरणीय स्थिरता और पारिस्थितिकी तंत्र के लचीलेपन को सुनिश्चित करने में मृदा संरक्षण सबसे महत्वपूर्ण है। पारंपरिक और आधुनिक दोनों तकनीकों का एकीकरण मिट्टी के क्षरण को संबोधित करने और भविष्य की पीढ़ियों के लिए इस महत्वपूर्ण संसाधन को संरक्षित करने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करता है। जबकि फसल चक्रण और संरक्षित कृषि जैसी सदियों पुरानी प्रथाएँ मिट्टी के कटाव को रोकने और मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, तथा प्रौद्योगिकी में प्रगति ने भी अभिनव समाधान पेश किए हैं। सटीक कृषि और उपग्रह इमेलजग से लेकर बायोचार, कृषि वानिकी और मृदा सेंसर के उपयोग तक, आधुनिक तकनीकें मिट्टी के स्वास्थ्य की निगरानी, प्रबंधन और उसे अधिक कुशलतापूर्वक और प्रभावी ढंग से बहाल करने की हमारी क्षमता को बढ़ाती हैं। पारंपरिक प्रथाओं के ज्ञान को अत्याधुनिक तकनीकों की शक्ति के साथ जोड़कर, हम मृदा संरक्षण प्रयासों को अनुकूलित कर सकते हैं, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम कर सकते हैं और अपनी कृषि प्रणालियों और प्राकृतिक पारिस्थितिकी प्रणालियों की दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित कर सकते हैं।

# गेंदे की उन्नत खेती एवं उपयोग

**रिशिका चौधरी एवं अनुज कुमार**

राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर एवं के.एन.के. उद्यानिकी महाविद्यालय, मंदसौर

**उपयोग**

गेंदा के फूलो का प्रयोग विभिन्न प्रकार से जैसे खुले फूलो के रूप मे माला बनाने मे, मंडप सजाने मे, पुजा करने मे, सुगन्धित तैल निकालने मे, पिगमेन्टस तैयार करने मे तथा मुर्गी के दाने के साथ खिलाने मे प्रयोग होता है।

इसके फूल एवं पत्तिया दवा एवं सुगंधित उत्पाद बनाने के कम आते है । पत्तियो की तीव्र महक मक्खियों एवं मच्छरों को भगाती है। गेंदा की सुगन्ध में एल–लेनोनेन, ओसीपेन, एल–लिनाईन एसीटेट, एल लिनालूल अफ्रीकी तथा फासीसी प्रजातियों में मिलते है। गेंदा में खाने योग्य रंग भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। जैसे हैलेनीन/अन्य फसलों के साथ गेंदे को उगाने से भूमि में सुत्रकृमियों की संख्या कम होती है, या दूसरी फसलें सुत्रकृमिक के प्रभाव से बच जाती है। अतः वैज्ञानिक तरीके से भी गेंदे की खेती करके किसान अधिक लाभ कमा सकते है।

**जलवायु**

गेंदे की उचित बठवार तथा अधिक उपज प्राप्त करने के लिए नम जलवायु की आवश्यकता है। इसके लिए अधिक व कम तापमान दोनो इसके लिए हानिकारक है। गेंदे के पौधों के लिए धूप वाली जगह उपयुक्त होती है, छाया वाली नहीं ।

**भूमि एंव उसकी तैयारी**

बलुई एंव बलुई दोमट भूमि जिसका पी.एच.मान 6–7.5 के बीच हो तथा भूमि मे जल भराव की समस्या ना हो, गेंदे की खेती व्यवसायिक खेती के लिए उपयुक्त रहती है । भूमि को एक जुताई मिटटी पलट हल से व 2 जुताई देशी हल से करके पाटा लगा देते है। जिससे भूमि भुरभुरी हो जाये। भूमि तैयार करते समय अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद 30 टन प्रति हैक्टेयर की दर से मिलानी चाहिए ।

**प्रजातिया एवं किस्में :** गेंदा एस्ट्रेसी कुल से सम्बंधित है। इसकी लगभग 33 प्रजातियाँ है जिनमें मुख्य निम्न है।

1. **अफ्रीकन गेंदा (टेजेटिस एरेकटा) –** इसके पौधे 80–100 सेमी. लम्बे होते है। इनकी पत्तीया चौडी तथा फूल पीले, नारंगी व सफेद रंग वाले गोलाकार होते है।

अ. कारनेशन के समान फूल वाले

ब. गुलदाउदी के समान फूल वाले

मुख्यतया कारेनेशन के समान फूल वाली नारंगी रंग की किस्में व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

2. **फ्रान्सीसी गेंदा (टेजेटिस पेटुला) –** इसे फ्रेंच या जाफरी गेंदा भी कहते है। इसके पौधे 20–60 सेमी. लम्बे होते है। पत्तियां गहरी हरी व तना लाल होता है। फूलों का रंग गहरा पीला नारंगी, लाल, चित्तीदार या मिश्रित होता है।

**किस्म**

**अफ्रीकन गेंदा :** इसमे पुसा नारंगी गेंदा एंव पुसा बसन्ती गेंदा मुख्य किस्म है अन्य किस्मे क्रेकर जैक, गोल्डन एज, क्राउन आफ गोल्ड एंव सनसेट जाइटे है।

**फ्रांसीसी गेंदा :** इसकी प्रमुख किस्मे पुसा अर्पिता, पिटाइट आरेज, पिटाइट येलो लेमन डाप, रस्टी रेड, डबल हामोनी, रेड ब्रोकेड़ आदि है।

**प्रर्वधन :** गेंदे मे प्रर्वधन मुख्यतः बीज द्वारा की किया जाता है जबकि शुद्धता बनाये रखने के लिए कटिंग से भी प्रर्वधन कर सकते है। एक हैक्टेयर के लिए 1–1.5 किग्रा. बीज पर्याप्त रहता है। गर्मी की फसल के लिए जनवरी – फरवरी, वर्षा ऋतु के लिए जून – जुलाई, सर्दी की फसल के लिए सितम्बर–अक्टूबर मे बीज नर्सरी मे बोया जाता है। इसके लिए 3 मी. लम्बाई की एक मी. चौडी एंव 15 से.मी. की क्यारी बनाते है। एंव उसमे 10 किग्रा /मी. दर से क्मपोस्ट खाद मीला देते है बीज बोने से पुर्व भुमि को उपचारित कर लेना चाहीए। बीजों को 6–8 सेमी. की दूरी पर तथा 2 सेमी. गहराई पर बोते है। इसके बाद बीजों को छनी हुई गोबर या पत्ती की खाद की हल्की परत से ढ़क देते है व हजारे से रोजाना आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करते रहते है।

**पौधरोपण :** प्रमुखतः बीज बुवाई के 1 माह बाद या जब पौधे मे 3–4 पत्तिया आ जाती है तो रौपाई कर देना चाहिए। पौधे नर्सरी से निकालने से 2–3 दिन पुर्व सिंचाई करनी चाहिए एंव अफ्रिकन गेंदे को 40X30 या 40X40 सें.मी. की दूरी पर रोपना चाहिए। फ्रांसीसी गेंदे को 20X20 या 30X30 सें.मी. की दूरी पर रोपना चाहिए। किस्म पुसा अर्पिता की पौधरोपण की उचित दुरी 60'45 सें.मी. है।

**फुनगयाना :** गेंदे के पौधे से अधिक फुल लेने के लिए रोपण के 30–40 दिनो बाद मुख्य तनो की कलिका को दो पत्तियों सहित तोड देना चाहिए इसके बाद दूसरी तहनियो की तोडने से पौधे से दूसरी शाखाए ज्यादर निकलती है जिससे अधिक फुल प्राप्त होते है।

**सिंचाई :** गर्मियो मे 3–5 दिन के अन्तराल पर व सर्दियो मे 7 – 15 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार सिचाई करनी चाहिए।

**पोषक तत्व :** गेंदे की अच्छी फसल के लिए 20 टन अच्छी सडी गोबर की खाद, नत्रजन 150–200 किग्र, फास्फोरस 80 किग्रा एंव पोटाश 80–100 किग्रा/हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। इसमे नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पुरी मात्रा भुमि की तैयारी के समय व शेश मात्रा 30–40 दिनो बाद मिलाना चाहिए।

**खरपतवार नियंत्रण :** गेंदे में 2–4 बार खरपतवार निकालना तथा 2–4 बार खेत की गुडाई करनी पड़ती है।

**फूल उत्पादन का समय :** ग्रीष्म कालीन फसल मे मई के मध्य में पुष्पन प्रारंभ हो जाता है। वर्षा कालीन फसल सितंबर से मध्य में व शीतकालीन फसल मे मध्य जनवरी से फूल आने लगते है।

**फूलों की तुडाई :** खिले हुए फुल सुबह या शाम को तोड़कर बांस की टोकरीयो मे पैक करके दूरस्त या स्थानीय बाजार मे भेजना चाहिए।

**उपज** : अफ्रीकन गेंदा से 18–20 टन तथा फ्रांसीसी गेंदे मे 10–12 टन प्रति हैक्टेयर फूल प्राप्त हो जाते है।

**गेंदे मे लगने वाले कीट**

| क्र. सं. | कीट | नियंत्रण |
|---|---|---|
| 1. | लीफ माइनर | प्रोपेनोफॉस 0.05 प्रतिशत |
| 2. | हैयरी कैटरपिलर | क्लोरोपायरीफॉस 2 मि.ली/ली. |
| 3. | लीफ हाफर | |
| 4. | रेड स्पाइडर माइट | क्यूनोलफॉस दवा की 1.5 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी |
| 5. | थ्रिप्स | डायमीथोयेट 0.05 प्रतिशत 10 दिन के अन्तर पर |

**गेंदे मे लगने वाली बीमारीयाँ**

| क्र. सं. | बीमारी | नियंत्रण |
|---|---|---|
| 1. | डैम्पिंग आफॅ | मैन्कोजेब 3–4 ग्राम/कि.ग्र. बीज की दर से उपचारित करे |
| 2. | लीफ स्फाट एव झुलसा | डाइथेन एम–45 2 ग्राम/ली. का घोल का छिडकाव करें |
| 3. | पाउड्री मिल्डयू | घुलनशीन सल्फर 0.3 प्रतिशत का घोल का छिडकाव करें |
| 4. | फ्लावर बड़ सड़न | मैंकोजेब दवा 2–3 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें |

❋❋❋

# ट्राइकोडर्मा की फसलों के रोग प्रबंधन में सफल कहानी किसानों की जुबानी

**डी. एल. यादव, प्रदीप कुमार एवं प्रताप सिंह**
कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, अनुसंधान निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

ट्राईकोडर्मा को कैसे प्रयोग में लें तथा किन–किन बातों का ध्यान रखें इस लेख में विभिन्न प्रकार के प्रयोग की विधि व खाद में ट्राइकोडर्मा संवर्धित करने को दर्शाया गया है जो निम्न प्रकार से है:–

1. **बीजोपचार:** बीजोपचार के लिए ट्राईकोडर्मा पाउडर को 8 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से मिश्रित कर छायाँ में सूखा लें तत्पश्चात् फिर बुवाई करें ध्यान रखें पाउडर बीजों के साथ अच्छी प्रकार से चिपक जाना चाहिए। अगर कंदों का उपचार करना हो तो 10 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर इसे 30 मिनट तक डुबोकर रखें तथा छायाँ में आधा घण्टा रखने के बाद बुवाई या रोपाई करें। ट्राईकोडर्मा से बीजोपचार करने से बीज जनित रोगों को प्रारम्भिक अवस्था में ही फैलने से बचाया जा सकता है साथ ही अंकुरण भी अच्छा होता है।

2. **नर्सरी उपचार:** सभी सब्जियों की पौध नर्सरी बनाकर तैयार की जाती है तथा यह हम भली भांति जानते हैं कि सब्जियों का बीज बहुत मंहगा होता है। जब हम बीजों की बुवाई नर्सरी में करते है तो कुछ बीज सड़कर नर्सरी में मर जाते हैं तथा कुछ उगने के बाद मर जाते हैं इसे आर्द्रगलन कहते हैं। यदि ट्राईकोडर्मा पाउडर को नर्सरी की क्यारियों में मिला दें या 5 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति लीटर पानी में घोलकर नर्सरी बेड को भिगोऐं तो इस बिमारी से छुटकारा पाया जा सकता है तथा पौधे भी स्वस्थ तैयार होगें जो खेत में लगाने पर भी स्वस्थ रहेगें।

3. **पौधों पर छिड़काव:** कुछ रोगों जैसे पर्ण चित्ती एवं झुलसा आदि की रोकथाम के लिए पौधों में रोग के लक्षण दिखाई देने पर 5–10 ग्राम ट्राईकोडर्मा पाउडर प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। छिड़काव जरूरत के अनुसार ही करें।

4. **मृदा उपचार:** कभी भी मृदा में ट्राईकोडर्मा को सीधे छिड़काव करने से लाभ नहीं मिलता है। हमेशा ट्राईकोडर्मा को सड़ी खाद में मिलाकर ही भुरकाव करें।

**ट्राईकोडर्मा को खाद में तैयार करने की विधि निम्न प्रकार है:**

100 किलोग्राम सड़ा हुआ गोबर की खाद व एक किलोग्राम ट्राईकोडर्मा लेकर दोनों को मिश्रित करें। ध्यान रखें अधिक नमी न हो तथा इस मिश्रण को बोरे की टाट डालकर छायाँ में रख दें। हर 7 दिन के अन्तराल पर मिश्रण को मिलावें। लगभग 20 दिन में ट्राईकोडर्मा मिश्रित खाद बनकर तैयार हो जावेगी। अब यह 100 किलोग्राम गोबर की खाद ट्राईकोडर्मा की खाद में बदल गई जिसे आवश्यकतानुसार फलों के गड्ढों में, सब्जियों में व फसलों में प्रयोग कर सकते हैं। अधिक मात्रा में ट्राईकोडर्मा मिश्रित खाद बनाने के लिए इस प्रकार के अनुपात से आगे बढ़े जैसे (10 किलोग्राम ट्राईकोडर्मा :1000 किलोग्राम गोबर की खाद)। ट्राईकोडर्मा को वर्मीकम्पोस्ट, नीम की खली, अरण्डी की खली आदि में भी तैयार किया जा सकता है। इस विधि से किसान एक व्यावसायिक उत्पाद की छोटी मात्रा से पर्याप्त मात्रा में अपने स्तर पर ट्राईकोडर्मा मिश्रित खाद बनाकर बड़े क्षेत्र में प्रयोग कर सकते हैं साथ ही अपने स्तर पर इसे गुणित कर ज्यादा से ज्यादा फसलों में भी प्रयोग कर सकते है।

**ट्राईकोडर्मा को प्रयोग करने के सुझाव:**

- ट्राईकोडर्मा को प्रमाणित संस्था से ही खरीदें।
- ट्राईकोडर्मा 6 महीने से ज्यादा पुराना न हो अन्यथा इसकी क्षमता धीरे–धीरे खत्म हो जाती है।
- बीज व पौधों का उपचार कार्य छायाँदार स्थान पर ही करें।
- ट्राईकोडर्मा के साथ–साथ अन्य कवकनाशी रसायनों का प्रयोग न करें अन्यथा यह फफूंद मर जाती है।
- सूखी मिट्टी में ट्राईकोडर्मा का प्रयोग करने से इसकी वृद्धि नहीं होगी तथा इसका कल्चर मर जायेगा। नमी इसके विकास और जीवित रखने के लिए एक अनिवार्य पहलू है।
- ट्राईकोडर्मा उपचारित बीजों को सूर्य की सीधी धूप न लगने दें।
- कार्बनिक खाद में मिलाने के बाद इसे लम्बी अवधि के लिए न रखें।

किसानों ने ट्राइकोडर्मा का प्रयोग फसलों के रोग प्रबंधन में किया जिसकी सफल कहानी किसानों ने लिखित में ट्राइकोडर्मा इकाई पर की जो कि निम्न प्रकार है –

1. अखिलेश दाधीच, गाँव अमरपुरा इन्होंने ट्राइकोडमा को लहसुन एवं गंहुँ में गोबर की खाद में ट्राइकोडर्मा मिलाकर डाला तथा रोग प्रबंधन में सन्तोशजनक परिणाम प्राप्त किया।
2. उमाशंकर दाधीच ने लहसुन में केंचुए की खाद में ट्राइकोडमा मिलाकर डाला और बहुत अच्छा परिणाम प्राप्त किया। साथ ही इन्होंने किसानों को ट्राइकोडर्मा का उपयोग करने की सलाह दी।
3. श्याम सुन्दर नागर, गाँव पडासलिया, तहसील दीगोद ने गेहुँ एवं लहसुन की फसल में जड़गलन के लिए वर्मीकम्पोस्ट के साथ ट्राइकोडर्मा मिलाकर कुछ दिन छायादार स्थान पर रखने के बाद फसल बुआई से पूर्व खेत में डाला जिससे फसल में अच्छा रोग निवारक मिला एवं इन्होंने भी ज्यादा से ज्यादा किसानों तक जागरूकता बढ़ाने पर जोर दिया।

4. किशन चन्द्र नागर, गाँव प्रेमपुरा, तहसील दीगोद ने लहसुन की फसल में गोबर की खाद में ट्राइकोडर्मा मिलाकर डाला जिसके परिणाम स्वरूप उन्होंने लहसुन की फसल में सन्तोशजनक परिणाम प्राप्त किया।
5. जितेन्द्र नागर ने सोयबीन की फसल में फसल सुखने की समस्या के कारण उसके निवारण के लिए ट्राइकोडर्मा से बीज उपचार करके बुआई की जिससे उनकी फसल सुखने की समस्या का निवारण तो हुआ ही साथ ही उपज भी अधिक हुई।
6. श्यामसुन्दर नागर लहसुन की फसल में गोबर की खाद में ट्राइकोडर्मा मिलाकर डाला तथा रोग प्रबंधन में अच्छा परिणाम प्राप्त किया।
7. हरिओम नागर ने धनियाँ की फसल में लोंगिया रोग से बचाव के लिए ट्राइकोडर्मा को गोबर की खाद में मिलाकर डाला जिससे उन्हें धनियाँ की फसल में लोंगिया रोग का एक बहुत बच्छा निवारक मिला।
8. मुकुट बिहारी नागर, गाँव राजपुरा तहसील लाड़पुरा ने धनियाँ की फसल लोंगिया रोग से बचाव के लिए ट्राइकोडर्मा से बीज उपचार किया व फसल की सिंचाई से पहले ट्राइकोडर्मा गोबर की खाद में मिलाकर डाला तथा रोग प्रबंधन में सन्तोशजनक परिणाम प्राप्त किया। साथ ही इन्होंने किसानों को ट्राइकोडर्मा का उपयोग बीज उपचार के लिए करने की सलाह दी।
9. हनुमान ने अफीम की फसल में पीलिया रोग के उपचार हेतु ट्राइकोडर्मा को गोबर की खाद में मिलाकर डाला अच्छा परिणाम प्राप्त किया।
10. चन्द्र प्रकाश नागर ने धनियाँ व लहसुन में लोंगिया रोग व दीमक के उपचार हेतु ट्राइकोडर्मा का उपयोग किया और अच्छा परिणाम प्राप्त किया। इन्होंने किसानों को कहा कि ट्राइकोडर्मा अन्य रसायनों से बेहतर व सस्ता है ।
11. गणेश सैनी, गाँव अर्जुनपुरा, तहसील लाड़पुरा ने बैंगन की फसल में गोबर की खाद में ट्राइकोडर्मा मिलाकर डाला तथा रोग प्रबंधन में सन्तोशजनक परिणाम प्राप्त किया।
12. सुरेश प्रकाश नागर, गाँव भाण्ड़ाहेड़ा ने लहसुन की फसल वृद्धि में रोग को हटाने के लिए ट्राइकोडर्मा का फसल पर छिड़काव किया और फसल की वृद्धि में बढ़त प्राप्त की। इन्होंने बताया कि ट्राइकोडर्मा का स्प्रे अन्य दवाओं कि तुलना में सस्ता है व इसके कोई हानिकारक प्रभाव भी नहीं है।
13. घनश्याम यादव, गाँव सुहाना, तहसील दीगोद ने सोयाबीन, लहसुन, आलू व चने की फसल में ट्राइकोडर्मा का उपयोग बीज उपचार, खाद से ब्रोडकास्टिंग व स्प्रे द्धारा किया। जिससे आलू की फसल में झुलसा रोग व चने में फसल सूखने की समस्या का निवारण हुआ। इन्होंने ने अन्य किसानों को सलाह दी कि ट्राइकोडर्मा का उपयोग करने से महँगी व जहर मुक्त खेती से छुटकारा मिलेगा, आर्थिक बचत होगी व साथ ही जमीन भी स्वस्थ रहेगी।
14. माणकचन्द यादव, ग्राम मोईकलाँ, तहसील साँगोद ने धान व सोयबीन की फसल पीलिया रोग के उपचार हेतु ट्राइकोडर्मा से बीज उपचार किया व ट्राइकोडर्मा को गोबर की खाद में मिलाकर डाला तथा रोग प्रबंधन में सन्तोशजनक परिणाम प्राप्त किया।
15. विजयराज यादव, गाँव टहला, तहसील दीगोद ने सोयबीन की फसल में जड़गलन के लिए वर्मीकम्पोस्ट के साथ ट्राइकोडर्मा मिलाकर कुछ दिन छायादार स्थान पर रखने के बाद फसल बुआई से पूर्व खेत में डाला जिससे फसल में अच्छा रोग निवारक मिला।
16. प्रहलाद बैरवा ने लहसुन की फसल में उखटा रोग प्रबंधन के लिए ट्राइकोडर्मा गोबर की खाद में मिलाकर डाला तथा रोग प्रबंधन में सन्तोषजनक परिणाम प्राप्त किया।
17. रतनलाल ने लहसुन की फसल में जड़गलन रोग से निवारण के लिए ट्राइकोडर्मा को वर्मीकम्पोस्ट के साथ मिलाकर कुछ दिन छायादार स्थान पर रखने के बाद फसल बुआई से पूर्व खेत में डाला जिससे फसल में अच्छा रोग निवारक मिला।
18. रूपकिशोर पचेरिया, गाँव उम्मेदपुरा, तहसील दीगोद ने सरसों की फसल में तना गलन रोग से बचाव के लिए ट्राइकोडर्मा द्वारा बीज उपचार किया और तना गलन रोग से निवारण पाया और ज्यादा से ज्यादा किसानों तक जागरूकता बढ़ाने पर जोर दिया।
19. सतीश पँवार, गाँव अर्जुनपुरा, तहसील लाड़पुरा ने बैंगन की फसल में ट्राइकोडर्मा को गुड़ के साथ पानी में मिलाकर डाला परिणामस्वरूप फसल सूखने की समस्या नहीं हुई। इन्होंने ने अन्य किसानों को सलाह दी कि ट्राइकोडर्मा का उपयोग करने से कई प्रकार के रोगों से छुटकारा मिलेगा व आर्थिक बचत होगी।

# बरसात के मौसम में पशु प्रबंधन

**दीपक कुमार, घनश्याम मीना, इंदिरा यादव एवं महेन्द्र चौधरी**
कृषि विज्ञान केन्द्र, बूंदी,

राजस्थान में वर्षा ऋतु का समय जून के अन्तिम सप्ताह से मध्य सितम्बर तक का होता है। बरसात में वातावरण में आर्द्रता बढ़ने व कीचड़ होने की वजह से यह मौसम जीवाणुओं व विशाणुओं के अनुकूल होता है, इसलिए मनुश्य एवं पशु अनेक रोगों से ग्रसित हो जाते हैं। इस दौरान वातावरण में अधिक आर्द्रता होने की वजह से वातावरण के तापमान में अधिक उतार–चढ़ाव देखने को मिलता है, जिसका कुप्रभाव प्रत्येक श्रेणी के पशुओं पर भी पड़ता हैं। इसी मौसम के दौरान परजीवियों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि देखने को भी मिलती है, जिनके द्वारा पशुओं को आंतरिक और बाह्य परजीवियों के रोग हो जाते हैं। पशुओं को प्रोटोजोन एवम् पैरासिटिक रोग हो जाते हैं। मौसमी बीमारियों की वजह से दुधारू पशुओं का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, इससे उनके दूध उत्पादन में कमी आ जाती है और उसके कारण दूध उत्पादक का काफी आर्थिक नुकसान हो जाता है। बरसात के मौसम में बारिश के कारण व उच्च तापमान के कारण, वातावरण में आर्द्रता बढ़ जाती है। आर्द्रता के कारण पशु अपने आप में तनाव महसूस करते हैं। वातावरण में आर्द्रता अधिक होने के कारण पशु की पाचन प्रक्रिया के साथ–साथ उसकी आन्तरिक रोगरोधक शक्ति पर भी असर पड़ता है, परिणामस्वरूप पशु अनेक रोगों से ग्रसित हो जाता हैं। पशुओं में होने वाले संक्रामक रोग बरसात के दिनों में पशुओं को प्रभावित करते हैं तथा कई बार पशुओं की जान भी चली जाती है। बरसात के मौसम में जगह–जगह पानी भरने से पशुओं का मिट्टी और पानी भी संक्रमित हो जाते हैं। जिसके संपर्क में आने से स्वस्थ पशुओं के संक्रमित होने की सम्भावना बढ़ जाती है। इस मौसम में पशुओं में होने वाले प्रमुख संक्रामक रोग जैसे– गलघोटू, लंगड़ा बुखार, खुरपका, मुंहपका, न्यूमोनिया आदि हैं। परजीवी रोगों में बबेसिओसिस, थैलेरिओसिस व परजीवी जूं, चिंचड़, गौ मक्खी आदि प्रमुख हैं।

## बरसात से पहले किए जाने वाले कार्य

पशुपालको को अपने पशुओं का टीकाकरण अवश्य करवाना चाहिए। इस मौसम में शेड में पानी नहीं भरना चाहिए तथा बाड़े की नालियाँ साफ सुथरी रहनी चाहिए। पशुओ का आवास सूखा हो, फिसलन वाला नहीं होना चाहिए। लगातार गीले होने के कारण पशुओं के खुरों में संक्रमण होने की संभावना अधिक रहती है, इसलिए सप्ताह में एक या दो बार हल्के लाल दवाई के घोल से पशुओं के खुरों को साफ करना चाहिए। ज्यादा नमी के कारण पशु आहार में फफूँद लगने की संभावना बढ़ जाती है तथा ऐसा आहार खाने से पशु बीमार हो सकते हैं। इसलिए प्शुआहार कम मात्रा में भण्डारित करें। बरसात से पहले पशु आवास ठीक करवा लेना अति आवश्यक है। अगर आवास की खिडकियां दरवाजें टूटे हों, तो उनकी मरम्मत करवा लें। अगर फर्श उखड़ा है तो वहां चूना या सीमेंट लगाकर जगह समतल बना दें, ताकि वहां बरसात का पानी इकठ्ठा न हो। अगर दीवार में दरारें है, तो वहां चूना या सीमेंट या पुट्टी लगाकर जगह समतल बना दें और सफेदी कर दें, ताकि उन दरारों में कीड़े–मकौड़े शरण न लें, क्योंकि कीड़े खाने के लिए बाड़े में मेंढक आ सकते हैं और उन्हें खाने के लिए सांप आ सकते हैं। सभी पशुओं को बाड़े से थोड़ी देर के लिए बाहर निकाल कर एक ड्रम में कुछ सूखी घास, कुछ नीम की पत्तियां, तुलसी और तेजपत्ता की पत्तियां आदि डालकर जला दें उससे निकलता धुँआ बाड़े में भरने दें, थोड़ी देर बाद उसे वहाँ से हटा दें। इस धुएं से बाड़े में मौजूद सब कीड़े–मकौड़े, मक्खी, मच्छर भाग जायेंगे। बाड़े की छत टूटी है, तो उसकी मरम्मत करवा लें, ताकि वहां से बरसात का पानी अंदर न आये। बरसात के आने से पहले दुधारू पशु के थन, अयन तथा पूंछ के इर्द–गिर्द के बाल कैंची से काटकर साफ कर दें, ताकि वहां पर कीचड़ न लगा रहे।

## बरसात में किये जाने वाले प्रबन्धन

पशुओं के बाड़े की छत से पानी नहीं टपकना चाहिए तथा बाड़े के आसपास पानी का ठहराव नहीं होना चाहिए। गंदे पानी के स्थानों पर मच्छर व मक्खी पनपते हैं, जो कि बीमारियों के प्रवाहक है। इनके रोकथाम के लिए केरोसिन का तेल या फिनायल या जला हुआ ऑयल पानी वाले गड्ढों में डाला जा सकता है। पशुओं को समय–समय पर आंतरिक व बाह्य परजीवियों से चिकित्सीय परामर्श द्वारा मुक्त रखना चाहिए। पशु के बीमार होने पर तुरंत पशु चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिए। आवास में समय–समय पर चूने का बुरकाव एवं कीटनाशकों का छिड़काव करते रहना चाहिए।

## पशुआहार प्रबंधन

पशु को बरसात में सुपाच्य संतुलित आहार दें, जिसमें 60 प्रतिशत गीला–हरा चारा और 40 प्रतिशत सूखा चारा होना चाहिए। गाय को एक लीटर दूध उत्पादन हेतु 300 ग्राम तथा भैंस को हर एक लीटर दूध उत्पादन हेतु 400 ग्राम दाने का मिश्रण अलग से देना चाहिए। साथ में रोज 30–40 ग्राम सादा नमक और 25–35 ग्राम खनिज मिश्रण खिलाना चाहिए। इस मौसम में आहार के भंडारण पर भी ध्यान देना चाहिए, अन्यथा दाना और चारा गीला होने से उसमें सड़न लग सकती है, जो हमारे पशु को बीमार कर देगी। पशु को हरा चारा अच्छी तरह झाड़ कर खिलाएं, क्योंकि बरसात के समय घोंघों का प्रकोप अधिक होता है एवं यह चारे के निचले तने एवं पत्तियों पर चिपके होते हैं। जैसे ही बरसात का मौसम चालू होता है और हमारा पशु भरपेट हरा चारा खाते हैं, तो उन्हें दस्त लग जाते हैं और इस कारण उनका दूध उत्पादन प्रभावित होता है। दस्त लगने का मुख्य कारण आहार में अचानक परिवर्तन है, चूंकि गर्मियों के मौसम में सामान्यतः पशु को सूखा चारा मिलता है और अचानक भरपेट हरा चारा मिलने से उसके पेट में सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाली किण्वन की क्रिया प्रभावित होती है और हमारे पशु को अपच होकर दस्त लग जाते हैं। बरसात के मौसम में हरी घास का उत्पादन अधिक होता है, परंतु इस घास मे पानी अधिक तथा पोषक तत्व एवं रेशे कम होते हैं, जो पशु के पाचन के लिए उचित नहीं होता और इसलिए भी इस मौसम में पशु को दस्त लग जाते हैं। इस समस्या से बचने के लिए हमें पशुओं को एकदम से हरा चारा भरपेट नहीं देना है, उन्हें हरे के साथ सूखा चारा जरूर दें और फिर धीरे–धीरे हरे को बढ़ाते जाएं। ध्यान रहे सूखे चारे में गीलापन या फफूंद न

हो, अन्यथा पशुओं को अफ्लाटोक्सिकोसिस, बदहजमी, दस्त जैसी बीमारियाँ हो सकती हैं। हरा चारा साफ होना चाहिए, उसमें कीचड़ न लगा हो। पशुओं को चरने भेजने से पहले घर पर सूखा चारा खिलाकर भेजे अन्यथा पानी वाला हरा चारा अधिक मात्रा में खाने से आफरा भी हो सकता है। पशुओं को साफ–सुथरा, ताजा पानी पिलायें, बरसात का गड्डों में भरा हुआ पानी नहीं पिलावें। पानी की गुणवत्ता का पशुओं के स्वास्थ्य पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। पानी में अधिक लवण व विषाक्त यौगिकों की मात्रा का पशुओं की वृद्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के पानी के उपभोग का शुष्क पदार्थ के सेवन पर प्रभाव पड़ता है। जिस दिन मौसम साफ हो उस दिन टंकी का सारा पानी निकाल कर उसकी अंदर तथा बाहर से चूने से लिपाई कर दें और सूखने दें, तत्पश्चात् उसमें साफ ताजा पानी भर दें।

**पशुआवास प्रबंधन**

अच्छा आवास का मतलब है सूखा, आरामदेह, हवादार आवास। पशु के दूध उत्पादन एवं आवास में गहरा सम्बन्ध होता है। जब पशु को आराम मिलता है तो दूध उत्पादन सामान्य और अच्छा मिलता है और अगर पशु तनाव में है तो दूध उत्पादन कम हो जाएगा। इसलिए बरसात के समय खुले में बंधे हुये पशुओं से दूध उत्पादन कम मिलता है। पशुओं को गीलापन पसंद नहीं होता, इसलिए वे बरसात में पक्की सड़क या सूखी जगह इकठ्ठा हो जाते है। कीचड़ में रहने से उनके खुरों में विशेषकर संकर पशुओं के खुरों में छाले हो जाते है, जो बाद में फट जाते हैं, जिन्हें अल्सर कहते है। अगर एक बार अल्सर हो जाये, तो लम्बे समय तक पशुओं का इलाज करना पड़ता है और उसमें काफी समय और खर्च होता है। पशुओं को जो शारीरिक तकलीफ होती है सो अलग। बकरी में घुटने से नीचे के बाल कैंची या ट्रीमर से काट दें, ताकि बारिश के समय भीगने से खुर पकने की समस्या न हों। जब बर्शात आने वाली हो तब खिडकी दरवाजो पर पर्दे लटका दें ताकि बौछार का पानी अन्दर नहीं आवें तथा बारिश रुकने पर पर्दे ऊचे उठा दे ताकि वायु का संचार अच्छा हो सके।

**पशुओ का स्वास्थ्य प्रबंधन**

बरसात के मौसम में सबसे जरुरी बात है दुधारू पशुओं का स्वास्थ्य प्रबंधन करना, क्योंकि अगर उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं है, तो उनके चारा ग्रहण में कमी हो जाती है और उससे उनके दूध उत्पादन में कमी हो जाती है। इसमें सबसे पहला उपाय है बचाव के तौर पर पशुओं का टीकाकरण करना। बरसात से पहले ही पशुओं के गलघोंटू, लंगड़ा बुखार, देवी रोग (PPR), खुरपका मुंहपका आदि रोगों के विरुद्ध टीके लगवा लेने चाहिए। बरसात में उनके पेट में कृमि हो जाते है। अतः उनके नियंत्रण हेतु उन्हें एल्बेंडेजोल, पिप्राजीन या पेनाक्युर नामक दवा डॉक्टर की सलाह लेकर उचित मात्रा में खिलाए। उनके शरीर पर जुऐं, चीचड़, पिस्सू ,गोमक्खी आदि बाह्य परजीवी हो जाते है। अतः उनके नियंत्रण हेतु पशु शरीर पर डेल्टामेथ्रिन (बुटोक्स) या साइपरमेथ्रिन नामक दवा 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। पशुआवास में कींटनाशको का छिडकाव करें। नीम की पत्तियो, घासफूंस आदि का धुँआ करें। कूलर पंखो का प्रबन्ध करें। खिडकी दरवाजो पर मच्छर जाली लगावे। कींटो को आकर्शित करने वाले लाइट ट्रेप का उपयोग करें।

**दूध दोहन का प्रबंधन**

बरसात के मौसम में थनों की बीमारी भी अधिक प्रचलित होती है, पशु थनेला रोग की चपेट में आ जाते हैं। थनेला रोग फैलने का प्रमुख कारण पशुआवास मे गन्दगी होना है। क्योंकि फर्श गीला और सूक्ष्म जीवाणुओं से भरा होता है। दूध दोहन के तुरंत बाद थन के छेद कुछ देर के लिए खुले रहते है और इसी समय अगर दुधारू पशु नीचे बैठ गया, तो उसे थनैला रोग होने की संभावना बढ़ जाती है। अतः इसे टालने के लिए बचाव के तौर पर दूध निकालने के बाद पशु के थनों का दवा के घोल में डुबोकर सीलबन्द करें तथा पशु को चारा या खल बाट दें, ताकि पशु थन के छेद बंद होने तक बैठे नहीं। जहाँ दूध दोहन करते है, वहां का फर्श साफ रखें। दूध दोहन से पहले और बाद में साफ गर्म पानी में जंतुनाशक दवा की कुछ बुँदे डालकर उसमें एक साफ कपड़ा भिगोकर उससे थन तथा अयन पोछ कर साफ करें। इससे थनैला रोग होने की संभावना काफी कम हो जाती है। दुधारू पशु को दूध दोहन से पहले साफ ठंडे पानी से नहला दें, इससे उसे ताजगी महसूस होगी। उसके शरीर में खून का संचार बढ़िया तरह से होगा और दूध उत्पादन में धीरे–धीरे बढ़ोतरी होगी।

**सामान्य रख–रखाव**

बरसात के मौसम में जब लगातार बारिश हो, उस दिन पशुओं को तेज बरसात से बचाएं और बाड़े में ही चारा खिलायें। उन्हें बरसात में ज्यादा देर तक भीगने न दें, अन्यथा पशुओं, बकरी के छोटे बच्चों में जुकाम, न्युमोनिया हो सकता है। बरसात के मौसम में कोशिश करें कि पशु गंदे पानी में न बैठे, क्योंकि इससे उसके कानों में सूक्ष्म जीवाणुओं का प्रकोप होकर कान से संबन्धित रोग हो सकता है, उसके जनन अंग में भी सूक्ष्म जीवाणुओं का प्रकोप होकर गर्भाशय दाह हो सकता है और इसी के साथ थनों के छेद में सूक्ष्म जीवाणुओं का प्रकोप होकर थनैला रोग हो सकता है। बाड़े के द्वार पर खुर धोने की सतही टंकी बनाये, जिसमें चूना तथा जंतुनाशक दवा फिनाइल आदि डाल दें, ताकि पशुओं के खुरों में संक्रमण, खुर सड़ना, खुर गलन आदि बीमारियां न जकड़ ले। उनके चारे की नांद की सफाई करें। साफ–सफाई एक बचाव का तरीका है। पशुशाला की खिड़कियाँ खुली रखनी चाहिए तथा बिजली के पंखों का प्रयोग करना चाहिए। जिससे पशुओं को उमस एवं गर्मी से राहत मिल सकें। 15 दिन के अंतराल पर परिजीवियों की रोकथाम हेतु कीटनाशक दवाइयों को पशु चिकित्सक की सलाह अनुसार प्रयोग करें। यदि इस मौसम में अन्य कोई विकार पशुधन में उत्पन्न होते हैं, तो तुरंत पशु चिकित्सक की सलाह लेकर उपचार करें।

# इफको नैनो डीएपी (तरल)

₹600/- | 500 मिली

बीज अंकुरण दर बढ़ाए

जड़ों का करे बेहतर विकास

खेती की लागत कम करे

रसायनिक उर्वरकों का प्रयोग घटाए

जल, मृदा एवं वायु प्रदूषण कम करे

#IFFCONanoUrea

IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives

# इफको नैनो यूरिया तरल

पेश है किसानों के लिए दुनिया का पहला नैनो यूरिया!

लागत कम करने में सहायक

मिट्टी की गुणवत्ता को बढ़ाए

पौधों के पोषण में सहयोगी

किसानों की आय में सुनिश्चित वृद्धि

फसल उपज को बढ़ाए

पारंपरिक यूरिया से सस्ता

FOLLOW US:

IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व

INDIAN FARMERS FERTILISER COOPERATIVE LIMITED
IFFCO Sadan, C-1 District Centre, Saket Place, New Delhi - 110017, INDIA
Phones : 91-11-26510001, 91-11-42592626. Website : www.iffco.coop

इण्डियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड
जयपुर तृतीय तल, नेहरू सहकार भवन, जयपुर, राजस्थान, राजस्थान 302001
दूरभाष : 0141-2740660, 2740307, 2740307

रजि. नं. : RAJHIN/2021/81869 पंजीयक समाचार पत्र भारत सरकार पोस्टल पंजीकृत संख्या कोटा/323/2023–25

# कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन एवं गुणवत्ता सुधार केन्द्र

## (Agriculture Technology Management and Quality Improvement Centre -ATMQIC)

## प्रसार शिक्षा निदेशालय

## कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

## स्थापना के उद्देश्य

- नवोन्मेषी कृषि प्रौद्योगिकी का प्रभावी हस्तानान्तरण
- किसान कॉल सेन्टर की स्थापना
- कृषि तकनीकी संग्रहालय की स्थापना
- कृषि संसाधन केन्द्रों की स्थापना
- कृषि आदान व उत्पाद बिक्री केन्द्र की स्थापना
- कृषक उपयोगी साहित्य प्रकाशन
- विश्वविद्यालय द्वारा विकसित विभिन्न तकनीकियों का संकलन एवं प्रदर्शन

**किसान कॉल सेन्टर**
**0744-2662700**

स्वामी प्रकाशक : डॉ. एस.के. जैन, निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
**Website : https://aukota.org**
**Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com**
दूरभाष : **0744- 2326727**

पुस्त प्रेष्य _____

स्वामी निदेशक प्रसार शिक्षा, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा प्रकाशक डॉ. एस.के. जैन, मुद्रक श्री जमील अहमद, मैसर्स डायमण्ड प्रिन्टर्स, शॉप नं. 2, काली मस्जिद के पास, नई धानमण्डी, कोटा से मुद्रित एवं निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, बोरखेड़ा, कोटा, राज. से प्रकाशित, संपादक डॉ.एस.के. जैन